

हमारे अक़ीदे

आयतुल्लाह नासिर मकारिम शीराज़ी

अलहसनैन इस्लामी नैटवर्क

बिस्मिल्लाहिर् रहमानिर् रहीम

इस किताब की तालीफ़ का मक़सद और इसकी ज़िम्मेदारी

1)हम इस दौर में एक बहुत बड़े बदलाव का मुशाहेदह कर रहे हैं,ऐसा बदलाव जो आसमानी अदयान में से सबसे बड़े दीन “दीने इस्लाम” में रुनुमा हो रहा है।हमारे ज़माने में इस्लाम ने एक नया जन्म लिया है,आज पूरी दुनिया के मुसलमान ग़फ़लत से बेदार हो गए हैं और अपने अस्ल दीन की तरफ़ पलट रहे हैं,अपनी मुश्किलात का हल इस्लामी तालीमात,अक्काइद व फ़रूअ में तलाश कर रहे हैं। (जो उनको किसी दूसरे मक़तबे फ़िक्र में नहीं मिला)इस बदलाव की दलील क्या है ? यह एक अलग बहस है,अहम बात यह है कि हम यह जान लें कि तमाम इस्लामी व ग़ैरे इस्लामी मुमालिक में जो यह इतना अज़ीम बदलाव आया है इसकी बिना पर दुनिया के बहुत से लोग यह जानने की कोशिश कर रहे हैं कि इस्लाम की तालीमात क्या है ? और इस्लाम में आलमे इँसानियत के लिए क्या नया पैग़ाम है ? इस नाज़ुक मरहले में हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम नमक मिर्च लगाये बग़ैर सादे, रौशन और काबिले फ़हम अन्दाज़ में लोगों को सही इस्लाम समझायें और जो लोग इस्लाम और मज़ाहिबे इस्लाम को ज़्यादा गहराई से समझने की तमन्ना रखते हैं उनके सामने इस्लाम की हकीक़त को बयान कर के उनकी प्यास

को बुझायें और गैरों को इस बात का मौका न दें कि हमारी जगह वह बोलने लगे या हमारी जगह वह कोई फैसला लें।

2) इस बात से इस बात से इँकार नहीं किया जा सकता कि इस्लाम में भी दूसरे आसमानी अदयान की तरह बहुत से मज़ाहिब पाये जाते हैं और अक़ीदती व अमली मसाइल में हर एक की अपनी जुदागाना खसूसियतें हैं, लेकिन यह फ़र्क इतना ज़्यादा नहीं है कि एक मज़हब का पैरोकार दूसरे मज़हब के मामले वाले के साथ हमकारी न कर सके। बल्कि यह सब आपस में मिल जुल कर शर्कों गर्ब से उठने वाले तेज़ तूफ़ानों के सामने अपने वुजूद की हिफ़ाज़त कर सकते हैं और अपने मुशतरक दुश्मनों के इरादों को नाकाम बना कर उनको अमली जामा पहना ने से रोक सकते हैं।

इस तसव्वुर को पैदा करने, उसको लागू करने और उसको अमीक (गहरा) बनाने के लिए कुछ उसूल व जवाबित की रिआयत ज़रूरी है और उनमें से सबसे ज़्यादा अहम यह है कि तमाम इस्लामी फ़िर्के आपस में एक दूसरे को इस तरह समझने की कोशिश करे कि एक के खसूसियात दूसरे पर अच्छी तरह रौशन हो जाये, क्यों कि एक दूसरे को जान कर और समझ कर ही ग़लत फहमियों को दूर कर के हमकारी के रास्ते को हमवार किया जा सकता है।

एक दूसरे को जानने और समझने का सबसे बेहतर ज़रिया यह है कि “इस्लाम के उसूल व फ़रूअ” में हर मज़हब के अक़ीदे को उस मज़हब के मशहूर उलमा से मालूम किया जाये, क्योंकि अगर नाआगाह लोगों से राबता किया जाये या किसी मज़हब के अक़ीदों को उनके दुश्मन मज़हब के लोगों से सुना जाये तो हुब्बो बुग़ज़ हुसूले मक़सद के रास्ते को बन्द कर देंगे और इस तरह आपस में जुदाई वाक़ेय हो जायेगी।

3)उपर बयान किये गये दोनो नुक्तों के तहत हमने इस छोटी सी किताब में “इस्लाम के उसूल व फ़रूअ” में “शिया मज़हब” के अक़ीदों को जमा करके लिखने की कोशिश की है और यह किताब हस्बे ज़ैल ख़ुसूसियात की हामिल है।

1. इसमें तमाम ज़रूरी मतालिब का निचौड़ मौजूद है ताकि पढ़ने वाले को दूसरी किताबों के पढ़ने की ज़रूरत पेश न आये।

2. तमाम बहसों रौशन और इबहाम से खाली हैं यहाँ तक कि उन इस्तलाहों से भी परहेज़ किया गया है जो फ़क़त इल्मी और होज़वी माहौल में इस्तेमाल होती हैं,

लेकिन साथ की साथ इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि इस काम से किसी बहस की गहराई में कोई कमी न वाक़ेअ होने पाये।

3. वैसे तो इस किताब का मक़सद फ़क़त अक़ीदों का बयान है न कि उनकी दलीलों का, लेकिन कुछ बहुत हस्सास बहसों के लिए जहाँ तक हालात ने इजाज़त दी है किताबो सुन्नत और अक़ल से उनकी दलीलों को भी बयान किया गया हैं।

4. हक़ीक़त को ज़ाहिर करने की गरज़ से हर किस्म की पर्दा पोशी,इजमाल और पेश दावरी से परहेज़ किया गया है।

5. तमाम बहसों में सभी मज़ाहिब के लिए अदब व इफ़फ़ते क़लम की रिआयत की गई है।

मौजूदा किताबचे को उपर बयान किये गये नुकाते की रिआयत करते हुए बैतुल्लाहिल हराम के सफ़र में (जिस में रूहो जान में ज्यादा सफ़ा पाई जाती है) लिखा गया,उसके बाद मुताद्दिद जलसों में कुछ उलमा के सामने इस पर गहराई के साथ बहस की हुई और इसको पूरा किया गया। मुझे उम्मीद है कि इस काम के ज़रिये हम ऊपर बयान किये गये मक़ासिद में कामयाब हुए हैं और रोज़े क्रियामत

के लिए हमने एक ज़खीरा किया है। अब हम कादिरे मुतलक की बारगाह में अपने हाथों को उठा कर दुआ करते हैं कि “रब्बना इन्नना मुनादियन युनादि लिलईमानि अन आमिन् बिरब्बिकुम फ़आमन्ना रब्बना फ़ग़फ़िर लना जुनूबना व कफ़िफ़र अन्ना सय्यिआतिना व तवफ़फ़ना मअल अबरार ”।

नासिर मकारिम शीराज़ी

मदरसा अमीरुल मोमेनीन (अ.) कुम

मुहर्मुल हराम सन् 1417 हिजरी क़मरी

पहला हिस्सा

खुदा शनासी व तौहीद

1.अल्लाह का वुजूद:

हमारा अक़ीदह है कि अल्लाह इस पूरी कायनात का ख़ालिक है, सिर्फ़ हमारे वुजूद में,तमाम जानवरों में,नबातात में,आसमान के सितारों में,ऊपर की दुनिया में ही नहीं बल्कि हर जगह पर तमाम मौजूदाते आलम की पेशानी पर उसकी अज़मत,इल्म व कुदरत की निशानियाँ ज़ाहिर व आशकार हैं।

हमारा अक़ीदह है कि हम इस दुनिया के राज़ों के बारे में जितनी ज़्यादाह फ़िक्र करेंगे उस ज़ाते पाक की अज़मत,उसके इल्म और उसकी कुदरत के बारे में उतनी ही ज़्यादाह जानकारी हासिल होगी। जैसे जैसे इंसान का इल्म तरक्की कर रहा है वैसे वैसे हर रोज़ उसके इल्म व हिकमत हम पर ज़ाहिर होते जा रहे हैं, जिस से हमारी फ़िक्र में इज़ाफ़ा हो रहा है,यह फ़िक्र उसकी ज़ाते पाक से हमारे इश्क़ में

इज़ाफ़े का सरचश्मा बनेगी और हर लम्हे हमको उस मुक़द्दस ज़ात से करीब से करीबतर करती रहेगी और उसके नूरे जलालो जमाल में गर्क करेगी।

क़ुरआने करीम फ़रमाता है कि “व फ़ी अलअर्ज़ि आयातुन लिल मुक़ीनीना * व फ़ी अनफ़ुसिकुम अफ़ला तुबसिरूना” यानी यक़ीन हासिल करने वालों के लिए ज़मीन में निशानियाँ मौजूद हैं और क्या तुम नहीं देखते कि खुद तुम्हारे वुजूद में भी निशानियाँ पाई जाती हैं ? [1]

“इन्ना फ़ी ख़ल्कि अस्समावाति व अलअर्ज़ि व इख़ितलाफ़ि अल्लैलि व अन्नहारि लआयातिन लिउलिल अलबाबि *अल्लज़ीना यज़कुरूना अल्लाहा क्रियामन व कुउदन व अला जुनुबिहिम व यतफ़क्करूना फ़ी ख़ल्कि अस्समावाति व अलअर्ज़ि रब्बना मा ख़लक़ता हाज़ा बातिला ”[2] यानी बेशक ज़मीन व आसमान की ख़िलक़त में और दिन रात के आने जाने में साहिबाने अक़ल के लिए निशानियाँ हैं। उन साहिबाने अक़ल के लिए जो खड़े हुए,बैठे हुए और करवँट से लेटे हुए अल्लाह का ज़िक़र करते हैं और ज़मीनों आसमान की ख़िलक़त के राज़ों के बारे में फ़िक़र करते हैं (और कहते हैं)ऐ पालने वाले तूने इन्हे बेहुदा ख़ल्क़ नहीं किया है।

2. सिफ़ाते जमाल व जलाल

हमारा अकीदह है कि अल्लाह की ज़ाते पाक हर ऐब व नक्स से पाक व मुनज़्ज़ह और तमाम कमालात से आरास्ता,बल्कि कमाले मुतलक व मुतलके कमाल है दूसरे अलफ़ाज़ में यह कहा जा सकता है कि इस दुनिया में जितने भी कमालात व ज़ेबाई पाई जाती है उसका सर चश्मा वही ज़ाते पाक है।

“ हुवा अल्लाहु अल्लज़ी ला इलाहा इल्ला हुवा अलमलिकु अलकुद्सु अस्सलामु अलमुमिनु अलमुहयमिनु अलअज़ीजु अलजब्बारु अलमुतकब्बिरु सुबहना अल्लाहि अम्मा युशरिकून हुवा अल्लाहु ख़ालिकु अलबारियु अलमुसव्विरु लहु अलअसमाउ अलहुस्ना युसब्बिहु लहु मा फ़ी अस्समावाति व अलअर्ज़ि व हुवा अलअज़ीजु अलहकीम ”[3] यानी वह अल्लाह वह है जिसके अलावा कोई माबूद नहीं है वही असली हाकिम व मालिक है,वह हर ऐब से पाक व मुनज़्ज़ह,वह किसी पर जुल्म नहीं करता,वह अमन देने वाला है,वह हर चीज़ की मुराक़ेबत करने वाला है,वह ऐसा कुदरत मन्द है जिसके लिए शिकस्त नहीं है,वह अपने नाफ़िज़ इरादे से हर काम की इस्लाह करता है,वह शाइस्ताए अज़मत है,वह अपने शरीक से मुनज़्ज़ह है। वह अल्लाह बेसाबका ख़ालिक व बेनज़ीर मुसव्विर है उसके लिए नेक नाम(हर तरह के सिफ़ाते कमाल) है,जो भी ज़मीनों व आसमानों में पाया जाता है उसकी तस्बाह करता है वह अज़ीज़ो हकीम है।

यह उसके कुछ सिफ़ाते जलाल व जमाल हैं।

3. उसकी ज़ाते पाक नामुतनाही (अपार, असीम)है

हमारा अक़ीदह है कि उसका वुजूद नामुतनाही है अज़ नज़रे इल्म व कुदरत,व अज़ नज़रे हयाते अबदीयत व अज़लीयत,इसी वजह से ज़मान व मकान में नहीं आता क्योंकि जो भी ज़मान व मकान में होता है वह महदूद होता है। लेकिन इसके बावजूद वह वक़्त और हर जगह मौजूद रहता है क्यों कि वह फ़ौक़े ज़मान व मकान है। “व हुवा अल्लज़ी फ़ी अस्समाइ इलाहुन व फ़ी अलअर्ज़ि इलाहुन व हुवा अलहकीमु अलअलीमु ”[4] यानी (अल्लाह)वह है जो ज़मीन में भी माबूद है और आसमान में भी और वह अलीम व हकीम है। “व हुवा मअकुम अयनमा कुन्तुम व अल्लाहु विमा तअमलूना बसीर ”[5] यानी तुम जहाँ भी हो वह तुम्हारे साथ है और जो भी तुम अन्जाम देते हो वह उसको देखता है।

हाँ वह हमसे हमारे से ज़्यादा नज़दीक है,वह हमारी रूहो जान में है,वह हर जगह मौजूद है लेकिन फिर भी उसके लिए मकान नहीं है। “व नहनु अकरबु इलैहि मिन हबलि अल वरीद ”[6] यानी हम उस से उसकी शह रगे गरदन से भी ज़्यादा करीब हैं।

“हुवा अलअव्वलु व अलआखिरु व ज़ाहिरु व बातिनु व हुवा बिकुल्लि शैइन अलीम [7] यानी वह (अल्लाह)अव्वलो आखिर व ज़ाहिरो बातिन है और हर चीज़ का जान ने वाला है।

हम जो कुरआन में पढ़ते हैं कि “ज़ु अलअर्शि अलमजीद ”[8]वह साहिबे अर्श व अज़मत है। यहाँ पर अर्श से मुराद बुलन्द पा तख्ते शाही नहीं है। और हम कुरआन की एक दूसरी आयत में जो यह पढ़ते हैं कि “अर्रहमानु अला अलअर्शि इस्तवा ” यानी रहमान (अल्लाह)अर्श पर है इसका मतलब यह नहीं है कि अल्लाह एक खास मकान में रहता है बल्कि इसका मतलब यह है कि पूरे जहान, माद्रे और जहाने मा वराए तबीअत पर उसकी हाकमियत है। क्यों कि अगर हम उसके लिए किसी खास मकान के कायल हो जायें तो इसका मतलब यह होगा कि हमने उसको महदूद कर दिया, उसके लिए मखलूक़ात के सिफ़ात साबित किये और उसको दूसरी तमाम चीज़ों की तरह मान लिया जबकि कुरआन खुद फ़रमाता है कि “ लैसा कमिस्लिहि शैउन ”[9] यानी कोई चीज़ उसके मिस्ल नहीं है।

“व लम यकुन लहु कुफ़ुवन अहद” यानी उसके मानिन्द व मुशाबेह किसी चीज़ का वुजूद नहीं है।

4) न वह जिस्म रखता है और न ही दिखाई देता है

हमारा अक़ीदह है कि अल्लाह आखों से हर गिज़ दिखाई नहीं देता, क्यों कि आखों से दिखाई देने का मतलब यह है कि वह एक जिस्म है जिसको मकान, रंग, शकल और सिम्त की ज़रूरत होती है, यह तमाम सिफ़तें मखलूक़ात की हैं, और अल्लाह इस से बरतरो बाला है कि उसमें मखलूक़ात की सिफ़तें पाई जायें।

इस बिना पर अल्लाह को देखने का अक़ीदा एक तरह के शिर्क में मुलत्बिस होना है। क्यों कि कुरआन फ़रमाता है कि “ला तुदरिकुहु अलअबसारु व हुवा युदरिकु अलअबसारा व हुवा लतीफ़ु अलखबीरु ” [10] यानी आँखें उसे नहीं देखता मगर वह सब आँखों को देखता है और वह बख़्श ने वाला और जान ने वाला है।

इसी वजह से जब बनी इस्राईल के बहाना बाज़ लोगों ने जनाबे मूसा अलैहिस्सलाम से अल्लाह को देखने का मुतालबा किया और कहा कि “लन नुमिना लका हत्ता नरा अल्लाहा जहरतन ”[11] यानी हम आप पर उस वक़्त तक ईमान नहीं लायेंगे जब तक खुले आम अल्लाह को न देख लें। हज़रत मूसा (अ.)उनको कोहे तूर पर ले गये और जब अल्लाह की बारगाह में उनके मुतालबे को दोहराया तो उनको यह जवाब मिला कि “लन तरानी व लाकिन उनज़ुर इला अलजबलि

फ़इन्नि इस्तकरा मकानहु फ़सौफ़ा तरानी फ़लम्मा तजल्ला रब्बुहु लिल जबलि
जअलाहुदक्कन व ख़रा मूसा सइक़न फ़लम्मा अफ़ाका क़ाला सुबहानका तुब्तु इलैका
व अना अक्व्लु अलमुमिनीनावल ”[12] यानी तुम मुझे हर गिज़ नही देख सकोगो
लेकिन पहाड़ की तरफ़ निगाह करो अगर तुम अपनी हालत पर बाकी रहे तो मुझे
देख पाओ गे और जब उनके रब ने पहाड़ पर जलवा किया तो उन्हें राख बना
दिया और मूसा बेहोश हो कर ज़मीन पर गिर पड़े,जब होश आया तो अर्ज़ किया
कि पालने वाले तू इस बात से मुनज़ज़ा है कि तुझे आँखों से देखा जा सके मैं तेरी
तरफ़ वापस पलटता हूँ और मैं ईमान लाने वालों में से पहला मोमिन हूँ। इस
वाक़िये से साबित हो जाता है कि खुदा वन्दे मुतआल को हर नही देखा जा
सकता।

हमारा अक़ीदह है कि जिन आयात व इस्लामी रिवायात में अल्लाह को देखने
का तज़केरह हुआ है वहाँ पर दिल की आँखों से देखना मुराद है, क्योँ कि कुरआन
की आयते हमेशा एक दूसरी की तफ़सीर करती हैं। “अल कुरआनु युफ़स्सिरु बअज़ुहु
बअज़न ”[13]

इस के अलावा हज़रत अली अलैहिस्सलाम से एक शख़्स ने सवाल किया कि
“या अमीरल मोमिनीना हल रअयता रब्बका ? ” यानी ऐ अमीनल मोमेनीन क्या

आपने अपने रब को देखा है? आपने फ़रमाया “आ अबुदु मा ला अरा ” यानी क्या मैं उसकी इबादत करता हूँ जिसको नहीं देखा ? इसके बाद फ़रमाया “ला तुदरिकुहु अलउयूनु बिमुशाहदति अलअयानि,व लाकिन तुदरिकुहु अलक़लूबु बिहक़ाइकि अलईमानि” [14]उसको आँखें तो ज़ाहिरी तौर पर नहीं देख सकती मगर दिल ईमान की ताक़त से उसको दर्क करता है।

हमारा अक़ीदह है कि अल्लाह के लिए मख़लूक की सिफ़ात का कायल होना जैसे अल्लाह के लिए मकान,जहत, मुशाहिदह व जिस्मियत का अक़ीदह रखना अल्लाह की माअरफ़त से दूरी और शिर्क में आलूदह होने की वजह से है। वह तमाम मुकिनात और उनके सिफ़ात से बरतर है, कोई भी चीज़ उसके मिस्ल नहीं हो सकती।

5) तौहीद, तमाम इस्लामी तालीमात की रूह है

हमारा अक़ीदह है कि अल्लाह की माअरफ़त के मसाइल में मुहिमतरीन मस्ला माअरफ़ते तौहीद है। तौहीद दर वाक़ेअ उसूले दीन में से एक अस्ल ही नहीं बल्कि तमाम अक़ाइदे इस्लामी की रूह है। और यह बात सराहत के साथ कही जा सकती है कि इस्लाम के तमाम उसूल व फ़रूअ तौहीद से ही वुजूद में आते हैं। हर मंज़िल पर तौहीद की बातें हैं ,वहदते ज़ाते पाक, तौहीदे सिफ़ात व अफ़आले खुदा और

दूसरी तफ़्सीर में वहदते दावते अंबिया, वहदते दीन व आईने ईलाही,वहदते क़िबलाव किताबे आसमानी,तमाम इंसानों के लिए अहकाम व क़ानूने ईलाही की वहदत,वहदते सफ़ूफ़े मुस्लेमीन और वहदते यौमुल मआद (क्रियामत)।

इसी वजह से कुरआने करीम ने तौहीद ईलाही से हर तरह के इनहेराफ़ और शिर्क की तरफ़ लगाव को ना बख़शा जाने वाला गुनाह कहा है। “इन्ना अल्लाहा ला यग़फ़िरु अन युशरका बिहि व यग़फ़िरु मा दूना ज़ालिका लिमन यशाउ व मन युशरिक बिल्लाह फ़क़द इफ़तरा इस्मन अज़ीमन ”[15] यानी अल्लाह शिर्क को हर गिज़ नही बख़शेगा,(लेकिन अगर)इसके (शिर्क)के अलावा (दूसरे गुनाह हैं तो) जिसके गुनाह चाहेगा बख़श देगा,और जिसने किसी को अल्लाह का शरीक करार दिया उसने एक बहुत बड़ा गुनाह अँजाम दिया।

“व लक़द उहिया इलैका इला अल्लज़ीना मिन क़बलिका लइन अशरकता लयहबितन्ना अमलुका वलतकूनन्ना मिन अलखासिरीना ”[16] यानी बातहकीक़ तुम पर और तुम से पहले पैग़म्बरों पर वही की गई कि अगर तुम ने शिर्क किया तो तुम्हारे तमाम आमाल हब्त(खत्म)कर दिये जायेंगे और तुम नुक़सान उठाने वालों में से हो जाओ गे।

6) तौहीद की किस्में

हमारा अक़ीदह है कि तौहीद की बहुत सी किस्में हैं जिन में से यह चार बहुत अहम हैं।

तौहीद दर ज़ात

यानी उसकी ज़ात यकता व तन्हा है और कोई उसके मिस्ल नहीं है

तौहीद दर सिफ़ात

यानी उसके सिफ़ात इल्म, कुदरत, अज़लीयत,अबदियत वतमाम उसकी ज़ात में जमा हैं और उसकी ऐने ज़ात हैं। उसके सिफ़ात मखलूक़ात के सिफ़ात जैसे नहीं हैं क्यों कि मखलूक़ात के तमाम सिफ़ात भी एक दूसरे से जुदा और उनकी ज़ात भी सिफ़ात से जुदा होती है। अलबत्ता ऐनियते ज़ाते खुदा वन्द बा सिफ़ात को समझने के लिए दिक्क़त व ज़राफते फ़िकरी की जरूरत है।

तौहीद दर अफ़आल

हमारा अक़ीदह है कि इस आलमें हस्ति में जो अफ़आल,हरकात व असरात पाये जाते हैं उन सब का सरचश्मा इरादए ईलाही व उसकी मशियत है। “अल्लाहु खालिकु कुल्लि शैइन व हुवा अला कुल्लि शैइन वकील ”[17] यानी हर चीज़ का खालिक अल्लाह है और वही हर चीज़ का हाफ़िज़ व नाज़िर भी है। “लहु मक़ालीदु अस्समावाति व अलअर्ज़ि ” [18]तमाम ज़मीन व आसमान की कुँजियाँ उसके दस्ते कुदरत में हैं।

“ला मुअस्सिरु फ़ी अलवुजूदि इल्ला अल्लाहु ” इस जहाने हस्ति में अल्लाह की ज़ात के अलावा कोई असर अन्दाज़ नहीं है।

लेकिन इस बात का हर गिज़ यह मतलब नहीं है कि हम अपने आमाल में मजबूर हैं,बल्कि इसके बर अक्स हम अपने इरादों व फ़ैसलों में आज़ाद हैं “इन्ना हदैनाहु अस्सबीला इम्मा शाकिरन व इम्मा कफ़ूरन ” [19]हम ने (इँसान)की हिदायत कर दी है (उस को रास्ता दिखा दिया है)अब चाहे वह शुक्रिया अदा करे (यानी उसको क़बूल करे)या कुफ़्राने नेअमत करे (यीनू उसको क़बूल न करे)। “व अन लैसा लिल इँसानि इल्ला मा सआ ” [20] यानी इँसान के लिए कुछ नहीं है

मगर वह जिसके लिए उसने कोशिश की है। कुरआन की यह आयत सरीहन इस बात की तरफ इशारा कर रही है कि इंसान अपने इरादे में आज़ाद है , लेकिन चूँकि अल्लाह ने इरादह की आज़ादी और हर काम को अँजाम देने की कुदरत हम को अता की है,हमारे काम उसकी तरफ़ इसनाद पैदा करते हैं इसके बग़ैर कि अपने कामों के बारे में हमारी ज़िम्मेदारी कम हो- इस पर दिक्कत करनी चाहिए। हाँ उसने इरादह किया है कि हम अपने आमाल को आज़ादी के साथ अँजाम दें ताकि वह इस तरीक़े से वह हमारी आजमाइश करे और राहे तकामुल में आगे ले जाये, क्यों कि इंसानों का तकामुल तन्हा आज़ादीये इरादह और इख़्तियार के साथ अल्लाह की इताअत करने पर मुन्हसिर है, क्यों कि आमाले जबरी व बेइख़्तियारी न किसी के नेक होने की दलील है और न बद होने की।

असूलन अगर हम अपने आमाल में मजबूर होते तो आसमानी किताबों का नज़ूल, अंबिया की बेसत, दीनी तकालीफ़ व तालीमो तरबीयत और इसी तरह से अल्लाह की तरफ़ से मिलनी वाली सज़ा या जज़ा ख़ाली अज़ मफ़हूम रह जाती।

यह वह चीज़ हैं जिसको हमने मकतबे आइम्मा-ए-अहलेबैत अलैहिमुस्सलाम से सीखा है उन्होंने हम से फ़रमाया है कि “न जबरे मुतलक सही है न तफ़वाज़े

मुतलक बल्कि इन दोनों के दरमियान एक चीज़ है, ला जबरा व ला तफ़वीज़ा व लाकिन अमरा बैना अमरैन ”[21]

तौहीद दर इबादत

यानी इबादत सिर्फ़ अल्लाह से मखसूस है और उसकी ज़ाते पाक के अलावा किसी माबूद का वुजूद नहीं है। तौहीद की यह किस्म सबसे अहम किस्म है और इस की अहमियत इस बात से आशकार हो जाती है कि अल्लाह की तरफ़ से आने वाले तमाम अंबिया ने इस पर ही ज़्यादा ज़ोर दिया है “व मा उमिरू इल्ला लियअबुदू अल्लाहा मुखलिसीना लहु अदीना हुनफ़आ..... व ज़ालिका दीनु अलक़य्यिमति ”[22] यानी पैग़म्बरों के इसके अलावा कोई हुकम नहीं दिया गया कि तन्हा अल्लाह की इबादत करें, और अपने दीन को उसके लिए खालिस बनाएँ और तौहीद में किसी को शरीक करार देने से दूर रहेंऔर यही अल्लाह का मोहकम आईन है।

अखलाक व इरफ़ान के तकामुल के मराहिल को तय करने से तौहीद और अमीक़तर हो जाती है और इंसान इस मँज़िल पर पहुँच जाता है कि फ़क़त अल्लाह

से लौ लगाये रखता है,हर जगह उसको चाहता है उसके अलावा किसी ग़ैर के बारे में नहीं सोचता और कोई चीज़ उसको अल्लाह से हटा कर अपनी तरफ़ मशगूल नहीं करती। कुल्ला मा शग़लका अनि अल्लाहि फ़हुवा सनमुका यानी जो चीज़ तुझ को अल्लाह से दूर कर अपने में उलझा ले वही तेरा बुत है।

हमारा अक़ीदह है कि तौहीद फ़क़त इन चार किस्मों पर ही मुन्हसिर नहीं है,बल्कि-

तौहीद दर मालकियत यानी हर चीज़ अल्लाह की मिल्कियत है। “ लिल्लाहि मा फ़ी अस्समावाति व मा फ़ी अलअर्ज़ि ”[23]

तौहीद दर हाकमियत यानी क़ानून फ़क़त अल्लाह का क़ानून है। “व मन लम यहकुम बिमा अनज़ला अल्लाहु फ़उलाइका हुमुल काफ़ीरूना ”[24] यानी जो अल्लाह के नाज़िल किये हुए (क़ानून के मुताबिक़) फ़ैसला नहीं करते काफ़िर हैं।

7)हमारा अक़ीदह है कि अस्ले तौहीदे अफ़आली इस हकीक़त की ताकीद करती है कि अल्लाह के पैग़म्बरों ने जो मोज़ात दिखाए हैं वह अल्लाह के हुक्म से थे, क्यौं कि कुरआने करीम हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के बारे में फ़रमाता है कि “व

तुबरिउ अलअकमहा व अलअबरसा बिइज़नि व इज़ तुखरिजु अलमौता बिइज़नि
”[25] यानी तुम ने मादर ज़ाद अँधों और ला इलाज कोढ़ियों को मेरे हुक्म से
सेहत दी!और मुर्दों को मेरे हुक्म से ज़िन्दा किया।

और जनाबे सुलेमान अलैहिस्सलाम के एक वज़ीर के बारे में फ़रमाया कि “क़ाला
अल्लज़ी इन्दहु इल्मुन मिन अलकिताबि अना आतिका बिहि क़बला अन यरतद्दा
इलैका तरफ़ुका फ़लम्मा रआहु मुस्तकिर्रन इन्दहु क़ाला हाज़ा मिन फ़ज़लि रब्बि”
यानी जिस के पास (आसमानी)किताब का थोड़ा सा इल्म था उसने कहा कि इस
से पहले कि आप की पलक झपके मैं उसे (तख़्ते बिलक़ीस)आप के पास ले
आउँगा,जब हज़रत सुलेमान ने उसको अपने पास खड़ा पाया तो कहा यह मेरे
परवरदिगार के फ़ज़ल से है।

इस बिना पर जनाबे ईसा की तरफ़ अल्लाह के हुक्म से लाइलाज बीमारों को
शिफ़ा (सेहत) देने और मुर्दों को ज़िन्दा करने की निसबत देना, जिसको कुरआने
करीम ने सराहत के साथ बयान किया है ऐने तौहीद है।

8) फ़रिशतगाने खुदा

फ़रिशतों के वुजूद पर हमारा अक्कीदह है कि और हम मानते हैं कि उन में से हर एक की एक खास ज़िम्मेदारी है-

एक गिरोह पैगम्बरों पर वही ले जाने पर मामूर हैं।[26]

एक गिरोह इंसानों के आमाल को हिफ़ज़ करने पर[27]

एक गिरोह रूहों को कब्ज़ करने पर[28]

एक गिरोह इस्तेक़ामत के लिए मोमिनो की मदद करने पर[29]

एक गिरोह जँग मे मोमिनो की मदद करने पर[30]

एक गिरोह बागी कौमों को सज़ा देने पर[31]

और उनकी एक सबसे अहम ज़िम्मेदारी इस जहान के निज़ाम में है।

क्यों कि यह सब जिम्मेदारियाँ अल्लाह के हुक्म और उसकी ताकत से है लिहाज़ अस्ले तौहीदे अफ़आली व तौहीदे रबूबियत की मुतनाफ़ी नही हैं बल्कि उस पर ताकीद है।

ज़िमनन यहाँ से मस्ला-ए-शफ़ाअते पैग़म्बरान, मासूमीन व फ़रिश्तेगान भी रौशन हो जाता है क्यों कि यह अल्लाह के हुक्म से है लिहाज़ा एने तौहीद है। “मा मिन शफ़ीइन इल्ला मिन बअदि इज़निहि ”[32] यानी कोई शफ़ाअत करने वाला नही है मगर अल्लाह के हुक्म से।

मस्ला ए शफ़ाअत और तवस्सुल के बारे में और ज़्यादा शरह (व्याख्या) नबूवते अंबिया की बहस में देंगे।

9)इबादत सिर्फ़ अल्लाह से मख़सूस है।

हमारा अक़ीदह है कि इबादत बस अल्लाह की ज़ाते पाक के लिए है। (जिस तरह से इस बारे में तौहीदे अद्ल की बहस में इशारा किया गया है)इस बिना पर जो भी उसके अलावा किसी दूसरे की इबादत करता है वह मुशरिक है, तमाम अंबिया की

तबलीग भी इसी नुक्ते पर मरकूज़ थी “उअबुदू अल्लाहा मा लकुम मिन इलाहिन गैरुहु” [33] यानी अल्लाह की इबादत करो उसके अलावा तुम्हारा और कोई माबूद नहीं है। यह बात कुरआने करीम में पैगम्बरों से मुताद्दिद मर्तबा नक़ल हुई है। मज़ेदार बात यह है कि हम तमाम मुसलमान हमेशा अपनी नमाज़ों में सूरए हम्द की तिलावत करते हुए इस इस्लामी नारे को दोहराते रहते हैं “इय्याका नअबुदु व इय्याका नस्तईनु ” यानी हम सिर्फ़ तेरी ही इबादत करते हैं और तुझ से ही मदद चाहते हैं।

यह बात ज़ाहिर है कि अल्लाह के इज़्ज से पैगम्बरों व फ़रिश्तों की शफ़ाअत का अक़ीदह जो कि कुरआने करीम की आयात में बयान हुआ है इबादत के मअना मे है।

पैगम्बरों से इस तरह का तवस्सुल कि जिस में यह चाहा जाये कि परवर दिगार की बारगाह में तवस्सुल करने वाले की मुश्किल का हल तलब करें, न तो इबादत शुमार होता है और न ही तौहीदे अफ़आली या तौहीदे इबादती के मुतनाफ़ी है। इस मस्ले की शरह नबूवत की बहस में बयान की जाएगी।

10) ज़ाते खुदा की हकीकत सबसे पौशीदा है

हमारा अक़ीदह है कि इसके बावजूद कि यह दुनिया अल्लाह के वुजूद के आसार से भरी हुई है फिर भी उसकी ज़ात की हकीकत किसी पर रौशन नहीं है और न ही कोई उसकी ज़ात की हकीकत को समझ सकता है, क्योंकि उसकी ज़ात हर लिहाज़ से बेनिहायत और हमारी ज़ात हर लिहाज़ से महदूद है लिहाज़ा हम उस की ज़ात का इहाता नहीं कर सकते “अला इन्नहु बिकुल्लि शैइन मुहीतु ”[34] यानी जान लो कि उस का हर चीज़ पर इहाता है। या यह आयत कि “व अल्लाहु मिन वराइहिम मुहीतु ”[35]यानी अल्लाह उन सब पर इहाता रखता है।

पैग़म्बरे इस्लाम (स.)की एक मशहूर व माअरूफ़ हदीस में मिलता है कि “मा अबदनाका हक्का इबादतिक व मा अरफ़नाका हक्का मअरिफ़तिक” [36] यानी न हम ने हक्के इबादत अदा किया और न हक्के माअरेफ़त लेकिन इसका मतलब यह नहीं है जिस तरह हम उसकी ज़ाते पाक के इल्मे तफ़सीली से महरूम हैं इसी तरह इजमाली इल्म व माअरेफ़ते से भी महरूम हैं और बाबे मअरेफ़तु अल्लाह में सिर्फ़ उन अलफ़ाज़ पर किनाअत करते हैं जिनका हमारे लिए कोई मफ़हूम नहीं है। यह मारिफ़तु अल्लाह का वह बाब है जो हमारे नज़दीक काबिले कबूल नहीं है और न

ही हम इसके मोतकिद हैं। क्यों कि कुरआन और दूसरी आसमानी किताबे अल्लाह की माअरेफ़त के लिए ही तो नाज़िल हुई है।

इस मोज़ू के लिए बहुत सी मिसाले बयान की जा सकती हैं जैसे हम रूह की हकीकत से वाकिफ़ नही हैं लेकिन रूह के वुजूद के बारे में हमें इजमाली इल्म है और हम उसके आसार का मुशाहेदा करते हैं।

इमाम मुहम्मद बाकिर अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि “ कुल्ला मा मय्यज़तमुहु बिअवहामिकुम फ़ी अदक्कि मुआनीहि मखलूकून मसन्ऊन मिस्लुकुम मरदूदुन इलैकुम” [37] यानी तुम अपनी फ़िक्र व वहम में जिस चीज़ को भी उसके दक्कीकतरीन मअना में तसव्वुर करोगे वह मखलूक और तुम्हारे पैदा की हुई चीज़ है, जो तुम्हारी ही मिस्ल है और वह तुम्हारी ही तरफ़ पलटा दी जायेगी।

अमीरुल मोमेनीन हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने मअरिफ़तु अल्लाह की बारीक व दक्कीक राह को बहुत सादा व ज़ेबा तबीर के ज़रिये बयान फ़रमाया है “लम युतलिइ अल्लाहु सुबहानहु अल उकूला अला तहदीदे सिफ़तिहि व लम यहजुबहा अमवाज़ा मअरिफ़तिहि ”[38] यानी अल्लाह ने अक़लों को अपनी ज़ात की हकीकत से आगाह नही किया है लेकिन इसके बावुजूद जरूरी माअरिफ़त से महरूम भी नही किया है।

11)न तर्क न तशबीह

हमारा अक्रीदह यह है कि जिस तरह से अल्लाह की पहचान और उसके सिफ़ात की मारेफ़त को तरक करना सही नहीं है उसी तरह उसकी ज़ात को दूसरी चीज़ों से तशबीह देना ग़लत और मुजिबे शिर्क है। यानी जिस तरह उसकी ज़ात को दूसरी मख़लूक से मुशाबेह नहीं माना जा सकता इसी तरह यह भी नहीं कहा जा सकता है कि हमारे पास उसके पहचान ने का कोई ज़रिया नहीं है और उसकी ज़ात असलन काबिले मारेफ़त नहीं है। हमें इस बात पर ग़ौर करना चाहिए क्यों कि एक राहे इफ़रात है दूसरी तफ़रीत।

दूसरा हिस्सा

नबूवत

12)नबियों की बेसत का फलसफ़ा

हमारा अक़ीदह है कि अल्लाह ने नोए बशर (इंसानों)की हिदायत के लिए और इंसानों को कमाले मतलूब व अबदी सआदत तक पहुँचाने के लिए पैग़म्बरों को भेजा है। क्यों कि अगर ऐसा न करता तो इंसान को पैदा करने का मक़सद फ़ोत हो जाता, इंसान गुमराही के दरिया मे गोता ज़न रहता और इस तरह नक़्जे गरज़ लाज़िम आती। “रसूलन मुबशशरीना व मुँज़िरीना लिअल्ला यकूना लिन्नासि अला अल्लाहि हुज्जतन बअदा रसुलि व काना अल्लाहु अज़ीज़न हकीमन ”[39] यानी अल्लाह ने खुश ख़बरी देने और डराने वाले पैग़म्बरों को भेजा ताकि इन पैग़म्बरो को भेज ने के बाद लोगो पर अल्लाह की हुज्जत बाकी न रहे (यानी वह लोगो को सआदत का रास्ता बतायें और इस तरह हुज्जत तमाम हो जाये)और अल्लाह अज़ीज़ व हकीम है।

हमारा अक़ीदह है कि तमाम पैग़म्बरो में से पाँच पैग़म्बर “उलुल अज़्म” (यानी साहिबाने शरीअत, किताब व आईने जदीद)थे। जिन को नाम इस तरह हैं

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम

हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम और

हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व आलिहि अजमईन।

“व इअज़ अख़ज़ना मिन अन्नबिय्यीना मीसाक़ाहुम व मिनका वमिन नूहि व इब्राहीमा व मूसा वईसा इब्नि मरयमा व अख़ज़ना मिन हुम मीसाक़न ग़लीज़न” [40] यानी उस वक़्त को याद करो जब हमने पैग़म्बरों से मीसाक़ (अहदो पैमान) लिया (जैसे) आप से , नूह से , इब्राहीम से, मूसा से और ईसा ईब्ने मरयम से और हम ने उन सब से पक्का अहद लिया (कि वह रिसालत के तमाम काम में और आसमानी किताब को आम करने में कोशिश करें)

“फ़सबिर कमा सबरा उलुल अज़िम मिन अर्रसुलि” [41] यानी इस तरह सब्र करो जिस तरह उलुल अज़म पैग़म्बरों ने सब्र किया।

हमारा अक़ीदह है कि हज़रत मुहम्मद (स.)अल्लाह के आखिरी रसूल हैं और उनकी शरिअत क्रियामत तक दुनिया के तमाम इंसानों के लिए है। यानी इस्लामी तालीमात,अहकाम मआरिफ़ इतने जामे हैं कि क्रियामत तक इंसान की तमाम माद्दी व मअनवी ज़रूरतों को पूरा करते रहेंगे। लिहाज़ा अब जो भी नबूवत का दावा करे व बातिल व बे बुनियाद है।

“व मा मुहम्मदुन अबा अहदिन मिन रिजालिकुम व लाकिन रसूलु अल्लाहि व खातमि अन्नबिय्यीना व काना अल्लाहि बिकुल्लि शैइन अलीमन ”[42] यानी मुहम्मद(स.) तुम में से किसी मर्द के बाप नहीं है लेकिन वह अल्लाह के रसूल और सिलसिलए नबूवत को ख़त्म करने वाले हैं और अल्लाह हर चीज़ का जानने वाला है।(यानी जो ज़रूरी था वह उन के इख़्तियार में दे दिया है)

13) आसमानी अदयान की पैरवी करने वालों के साथ ज़िन्दगी बसर करना।

वैसे तो इस ज़माने में फ़क़त इस्लाम ही अल्लाह का आईन हैं, लेकिन हम इस बात के मोतक़िद हैं कि आसमानी अदयान की पैरवी करने वाले अफ़राद के साथ मेल जोल के साथ रहा जाये चाहे वह किसी इस्लामी मुल्क में रहते हों या ग़ैरे

इस्लामी मुल्क में, लेकिन अगर उन में से कोई इस्लाम या मुसलमानों के मुक़ाबिले में आ जाये तो “ला यनहा कुमु अल्लाहु अनि अल्लज़ीना लम युक्रातिलू कुम फ़ी अद्दीनि व लम युखरिजु कुम मिन दियारि कुम अन तबरू हुम व तुक्रसितू इलैहिम इन्ना अल्लाहा युहिब्बुल मुक्रसितीना ”[43] यानी अल्लाह ने तुम को उन के साथ नेकी और अदालत की रिआयत करने से मना नहीं किया है, जो दीन की वजह से तुम से न लड़ें और तुम को तुम्हारे वतन व घर से बाहर न निकालें, क्यों कि अल्लाह अदालत की रिआयत करने वालों को दोस्त रखता है।

हमारा अक़ीदह है कि इस्लाम की हक़ीक़त व तालीमात को मनतक़ी बहसों के ज़रिये तमाम दुनिया के लोगों के सामने बयान किया जा सकता है। और हमारा अक़ीदह है कि इस्लाम में इतनी ज़्यादा जज़ाबियत पाई जाती हैं कि अगर इस्लाम को सही तरह से लोगों के सामने बयान किया जाये तो इंसानों की एक बड़ी तादाद को अपनी तरफ़ मुतवज्जेह कर सकता है, खास तौर पर इस ज़माने में जबकि बहुत से लोग इस्लाम के पैग़ाम को सुनने के लिए आमादा हैं।

इसी बिना पर हमारा अक़ीदह यह है कि इस्लाम को लोगों पर ज़बर दस्ती न थोपा जाये “ला इकरह फ़ी अद्दीन क़द तबय्यना अरूशदु मिन अलगई।” यानी दीन

को क़बूल करने में कोई ज़बर दस्ती नहीं है क्योंकि अच्छा और बुरा रास्ता आशकार हो चुका है।

हमारा अक़ीदह है कि मुस्लिमानों का इस्लाम के क़वानीन पर अमल करना इस्लाम की पहचान का एक ज़रिया बन सकता है लिहाज़ा ज़ोर ज़बरदस्ती की कोई ज़रूरत ही नहीं है।

14- अंबिया का अपनी पूरी ज़िन्दगी में मासूम होना

हमारा अक़ीदह है कि अल्लाह के तमाम पैग़म्बर मासूम हैं यानी अपनी पूरी ज़िन्दगी में चाहे वह बेसत से पहले की ज़िन्दगी हो या बाद की गुनाह, ख़ता व ग़लती से अल्लाह की तईद के ज़रिये महफ़ूज़ रहते हैं। क्योंकि अगर वह किसी गुनाह या ग़लती को अँजाम दे गें तो उन पर से लोगों का एतेमाद ख़त्म हो जायेगा और इस हालत में न लोग उनको अपने और अल्लाह के दरमियान एक मुतमइन वसीले के तौर पर क़बूल नहीं कर सकते हैं और न ही उन को अपनी ज़िन्दगी के तमाम आमाल में पेशवा करार दे सकते हैं।

इसी बिना पर हमारा अक़ीदह यह है कि कुरआने करीम कि जिन आयात में जाहिरी तौर पर नबियों की तरफ़ गुनाह की निस्बत दी गई है वह “तरके औला” के क़बील से है। (तरके औला यानी दो अच्छे कामों में से एक ऐसे काम को चुनना जिस में कम अच्छाई पाई जाती हो जबकि बेहतर यह था कि उस काम को चुना जाता जिस में ज़्यादा अच्छाई पाई जाती है।)या एक दूसरी ताबीर के तहत “हसनातु अलअबरारि सय्यिआतु अलमुकर्राबीन” [44]कभी कभी नेक लोगों के अच्छे काम भी मुकर्रब लोगों के गुनाह शुमार होते हैं। क्यों के हर इंसान से उस के मक़ाम के मुताबिक़ अमल की तवक्को की जाती है।

15- अंबिया अल्लाह के फ़रमाँ बरदार बन्दे हैं।

हमारा अक़ीदह है कि पैग़म्बरों और रसूलों का का सब से बड़ा इफ़तेखार यह था कि वह अल्लाह के मुती व फ़रमाँ बरदार बन्दे रहे। इसी वजह से हम हर रोज़ अपनी नमाज़ों में पैग़म्बरे इसलाम के बारे में इस जुम्ले की तकरार करते हैं “व अशहदु अन्ना मुहम्मदन अब्दुहु व रसूलुहु। ” यानी मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद (स.)अल्लाह के रसूल और उसके बन्दे हैं।

हमारा अक्रीदह है कि अल्लाह के पैग़म्बरों में से न किसी ने भी उल्हियत (अपने खुदा होने)का दावा किया और न ही लोगों को अपनी इबादत करने के लिए कहा। “मा काना लिबशरिन अन युतियहु अल्लाहु अलकिताबा व अलहुक्मा व अन्नबूवता सुम्मा यकूला लिन्नासि कून् इबादन ली मिन दूनि अल्लाह ”।[45] यानी यह किसी इंसान को ज़ेबा नहीं देता कि अल्लाह उसको आसमानी किताब, हिकमत और नबूवत अता करे और वह लोगों से कहे कि अल्लाह को छोड़ कर मेरी इबादत करो।

यहाँ तक कि हज़रत ईसा (अ.)ने भी लोगों को अपनी इबादत के लिए नहीं कहा वह हमेशा अपने आप को अल्लाह का बन्दा और उस का रसूल कहते रहे। “लन यस्तनकिफ़ा अलमसीहु अन यकूना अब्दन लिल्लाहि व ला अलमलाइकतु अलमुकर्रबूना” [46]यानी न हज़रत ईसा (अ.)ने अल्लाह के बन्दे होने से इँकार किया और न ही उस के मुकर्रब फ़रिश्ते उसके बन्दे होने से इँकार करते हैं।

ईसाईयों की आज की तारीख़ खुद इस बात की गवाही दे रही है “तसलीस” का मस्ला (तीन खुदाओं का अक्रीदह)पहली सदी ईसवी में नहीं पाया जाता था यह फ़िक्र बाद में पैदा हुई।

16- अँबिया के मोज़ात व इल्मे ग़ैब

पैग़म्बरो का अल्लाह का बन्दा होना इस बात की नफ़ी नही करता कि वह अल्लाह के हुक्म से हाल, गुज़िश्ता और आइन्दा के पौशीदा अमूर से वाक्फ़ न हो। “आलिमु अलग़ैबि फ़ला युज़हिरु अला ग़ैबिहि अहदन इल्ला मन इरतज़ा मिन रसूलिन।” [47] यानी अल्लाह ग़ैब का जान ने वाला है और किसी को भी अपने ग़ैब का इल्म अता नही करता मगर उन रसूलों को जिन को उस ने चुन लिया है।

हम जानते हैं कि हज़रत ईसा (अ.)का एक मोज़ा यह था कि वह लोगो को ग़ैब की बातों से आगाह कर ते थे। “व उनब्बिउ कुम बिमा ताकुलूना व मा तदखिरूना फ़ी बुयूति कुम। ”[48]में तुम को उन चीज़ों के बारे में बताता हूँ जो तुम खाते हो या अपने घरों में जमा करते हो।

पैग़म्बरे इस्लाम (स.)ने भी तालीमे इलाही के ज़रिये बहुत सी पौशीदा बातों को बयान किया है “ ज़ालिका मिन अँबाइ अलग़ैबि नुहीहि इलैका ”[49]यानी यह ग़ैब की बातें हैं जिन की हम तुम्हारी तरफ़ वही करते हैं।

इस बिना पर अल्लाह के पैगम्बरों का वही के ज़रिये और अल्लाह के इज़्ज से ग़ैब की ख़बरे देना माने नहीं है। और यह जो कुरआने करीम की कुछ आयतों में पैगम्बरे इस्लाम के इल्मे ग़ैब की नफ़ी हुई है जैसे “व ला आलिमु अलग़ैबा व ला अकूलु लकुम इन्नी मलक” [50] यानी मुझे ग़ैब का इल्म नहीं और न ही मैं तुम से यह कहता हूँ कि मैं फ़रिश्ता हूँ। यहाँ पर इस इल्म से मुराद इल्मे ज़ाती और इल्मे इस्तक़लाली है न कि वह इल्म जो अल्लाह की तालीम के ज़रिये हासिल होता है। जैसा कि हम जानते हैं कि कुरआन की आयतें एक दूसरी की तफ़सीर करती हैं।

हमारा अक़ीदह है कि अल्लाह के नबियों ने तमाम मोज़ात व मा फ़ौके बशर काम अल्लाह के हुक्म से अँजाम दिये हैं और पैगम्बरो का अल्लाह के हुक्म से ऐसे कामों को अँजाम देना का अक़ीदह रखना शिर्क नहीं है। जैसा कि कुरआने करीम में भी ज़िक्र है कि हज़रत ईसा (अ.)ने अल्लाह के हुक्म से मुर्दों को ज़िन्दा किया और ला इलाज बीमारों को अल्लाह के हुक्म से शिफ़ा अता की “व उबरिउ अलअकमहा व अलअबरसा व उहयि अलमौता बिइज़निल्लाह ”[51]

17- पैगम्बरों के ज़रिये शफ़ाअत का मस्ला

हमारा अक्रीदह है कि अल्लाह के तमाम पैगम्बर और उन मे सब से अफ़ज़ल व आला पैगम्बरे इस्लाम (स.)को शफ़ाअत का हक हासिल है और वह गुनाह गैरों के एक खास गिरोह की शफ़ाअक करेंगे। लेकिन यह सब अल्लाह की इजाज़त और इज़्जत से है। “मा मिन शफ़िइन इल्ला मिन बअदि इज़्जिहि” [52] यानी कोई शफ़ाअत करने वाला नही है मगर अल्लाह की इजाज़त के बाद।

“मन ज़ा अल्लज़ी यशफ़उ इन्दहु इल्ला बिइज़्जिहि ”[53] कौन है जो उसके इज़्जत के बगैर शफ़ाअत करे।

कुरआने करीम की वह आयतें जिन में मुतलक़ा तौर पर शफ़ाअत की नफ़ी के इशारे मिलते हैं उन में शफ़ाअत से मराद शफ़ाअते इस्तक़लाली और शफ़ाअत बदूने इजाज़त मुराद है। या फिर उन लोगों के बारे में हैं जो शफ़ाअत की काबलियत नही रखते जैसे “मिन क़ब्लि अन यातिया यौमुन बैउन फ़ीहि व ला ख़ुल्लतुन वला शफ़ाअतुन ” [54]यानी अल्लाह की राह में ख़र्च करो इस से पहले कि वह दिन आ जाये जिस दिन न ख़रीद व फ़रोश होगी (ताकि कोई अपने लिए सआदत व निजात ख़रीद सके)न दोस्ती और न शफ़ाअत। बार बार कहा जा चुका है कि कुरआने करीम की आयतें एक दूसरे की तफ़सीर कर ती हैं।

हमारा अक्रीदह है कि मस्ला-ए- शफ़ाअत लोगों को तरबीयत देने और उन को गुनाह के रास्ते से हटा कर सही राह पर लाने,उन के अन्दर तक़वे व परहेज़गारी का शौक़ पैदा कर ने और उन के दिलों में उम्मीद पैदा करने का एक अहम वसीला है। क्यों कि मस्ला-ए शफ़ाअत बे हिसाब किताब नहीं है शफ़ाअत फ़क़त उन लोगो के लिए है जो इस की लियाक़त रखते हैं। यानी शफ़ाअत उन लोगों के लिए है जिन्होंने अपने गुनाहों की कसरत की बिना पर अपने राबते को शफ़ाअत करने वालों से कुल्ली तौर पर मुनक़तअ न किया हो।

इस बिना पर मस्ला-ए शफ़ाअत गुनाहगारों को क़दम क़दम पर तँबीह कर ता रहता है कि अपने आमाल को बिल कुल ख़राब न करो बल्कि नेक आमल के ज़रिये अपने अन्दर शफ़ाअत की लियाक़त पैदा करो।

18- मस्ला-ए-तवस्सुल

हमारा अक्रीदह है कि मस्ला- ए- तवस्सुल भी मस्ला-ए- शफ़ाअत की तरह है। मस्ला-ए -तवस्सुल मानवी व माददी मुश्किल में घिरे इँसानों को यह हक़ देता है कि वह अल्लाह के वलीयों से तवस्सुल करें ताकि वह अल्लाह की इजाज़त से उन की मुश्किलों के हल को अल्लाह से तलब करें। यानी एक तरफ़ तो ख़ुद अल्लाह की

बारगाह में दुआ करते हैं दूसरी तरफ़ अल्लाह के वलियों को वसीला करार दे। “व लव अन्ना हुम इज़ ज़लमू अनफुसाहुम जाउका फ़स्तग़फ़रू अल्लाहा व अस्तग़फ़रा लहुम अर्रसूलु लवजदू अल्लाहा तव्वाबन रहीमन” [55] यानी अगर यह लोग उसी वक़्त तुम्हारे पास आ जाते जब इन्होंने अपने ऊपर जुल्म किया था और अल्लाह से अपने गुनाहों की माफ़ी माँगते और रसूल भी उनके लिए तलबे मग़फ़ेरत करते तो अल्लाह को तौबा क़बूल करने वाला और रहम करने वाला पाते।

हम जनाबे यूसुफ़ के भाईयों की दास्तान में पढ़ते हैं कि उन्होंने अपने वालिद से तवस्सुल किया और कहा कि “या अबाना इस्तग़फ़िर लना इन्ना कुन्ना ख़ातेईना ” यानी ऐ बाबा हमारे लिए अल्लाह से बख़शिश की दुआ करो क्यों कि हम ख़ताकार थे। उन के बूढ़े वालिद हबज़रत याक़ूब (अ.)ने जो कि अल्लाह के पैग़म्बरे थे उनकी इस दरख़्वास्त को क़बूल किया और उनकी मदद का वादा करते हुए कहा कि “सौफ़ा अस्तग़फ़िरु लकुम रब्बि” [56]में जल्दी ही तुम्हारे लिए अपने रब से मग़फ़ेरत की दुआ करूँगा। यह इस बात पर दलील है कि गुज़िश्ता उम्मतों में भी तवस्सुल का वुजूद था और आज भी है।

लेकिन इंसान को इस हद से आगे नहीं बढ़ना चाहिए औलिया-ए- खुदा को इस अम्र में मुस्तक़िल और अल्लाह की इजाज़त से बेनियाज़ नहीं समझना चाहिए क्यों कि यह कुफ़्रो शिर्क का सबब बनता है।

और न तवस्सुल को औलिया- ए- खुदा की इबादत के तौर पर करना चाहिए क्यों कि यह भी कुफ़्र और शिर्क है। क्यों कि औलिया- ए- खुदा अल्लाह की इजाज़त के बग़ैर नफ़े नुख़सान के मालिक नहीं है। “कुल ला अमलिकु नफ़सी नफ़अन व ला ज़रन इल्ला मा शा अल्लाह ”[57]यानी इन से कह दो कि मैं अपनी ज़ात के लिए भी नफ़े नुख़सान का मालिक नहीं हूँ मगर जो अल्लाह चाहे। इस्लाम के तमाम फ़िक्रों की अवाम के दरमियान मस्ला-ए- तवस्सुल के सिलसिले में इफ़रात व तफ़रीत पाई जाती है उन सब को हिदायत करनी चाहिए।

19- तमाम अँबिया की दावत के उसूल एक हैं।

हमारा अक़ीदह है कि अल्लाह के तमाम अँबिया-ए- ईलाही का मक़सद एक था और वह था इंसान की सआदत जिसको हासिल करने के लिए अल्लाह और कियामत पर ईमान,सही दीनी तालीम व तरबीयत और समाज में अखलाकी उसूल को मज़बूती अता करना ज़रूरी था। इसी वजह से हमारे नज़डदीक तमाम अँबिया

मोहतरम हैं और यह बात हम ने कुरआने करीम से सीखी है “ला नुफ़र्रिकु बैना अहदिन मिन रुसुलिहि” [58]यानी हम अल्लाह के नबियों के दरमियान कोई फ़र्क़ नहीं कर ते।

ज़माने के गुज़रने के साथ साथ जहाँ इँसान में आला तालीम को हासिल करने की सलाहियत बढ़ती गई वहीं अदयाने ईलाही तदरीजन कामिल तर और उनकी तालीमात अमीक तर होती गई यहाँ तक कि आख़िर में कामिलतरीन आईने ईलाही (इस्लाम)रू नुमा हुआ और इस के ज़हूर के बाद “अल यौम अकमलतु लकुम दीना कुम व अतममतु अलैकुम नेअमती व रज़ीतु लकुम अल इस्लामा दीनन” यानी “आज के दिन मैंने तुम्हारे दीन को कामिल कर दिया और तुम पर अपनी नेअमतों को पूरा किया और तुम्हारे लिए दीने इस्लाम को चुन लिया” का एलान कर दिया गया।

20- गुज़िशता अँबिया की ख़बरे

हमारा अक़ीदह है कि बहुत से अँबिया ने अपने बाद आने वाले नबियों के बारे में अपनी उम्मत को आगाह कर दिया था । इन में से हज़रत मूसा (अ.)और हज़रत ईसा (अ.)ने पैग़म्बरे इस्लाम (स.)के बारे में बहुत सी रौशन निशानियाँ बयान कर

दी थी जो आज भी उनकी बहुत सी किताबों में मौजूद है। “अल्लज़ीना यत्तबिउना अर्रसूला अन्नबिया अलउम्मीया अल्लज़ी यजिदूनहु मकतूवन इन्दाहुम फ़ी अत्तवराति व अलइँजीलिउलाइका हुमुल मुफ़लिहून ”[59] यानी वह लोग जो अल्लाह के रसूल की पैरवी कर ते हैं उस रसूल की जिसने कहीं दर्स नही पढ़ा (लेकिन आलिम व आगाह है)इस रसूल में तौरात व इँजील में बयान की गई निशानियों को पाते हैं....यह सब कामयाब हैं।

इसी वजह से तारीख में मिलता है कि पैगम्बरे इस्लाम(स.)के ज़हूर से पहले यहूदियों का एक बहुत बड़ा गिरोह मदीने आ गया था और आप के ज़हूर का बे सब्री से मुन्तज़िर था। क्यों कि उन्होंने अपनी किताबों में पढ़ा था कि वह इसी सर ज़मीन से ज़हूर करेंगे। आप के ज़हूर के बाद उन में से कुछ लोग तो आप पर ईमान ले आये लेकिन जब कुछ लोगो ने अपने फ़ायदे को खतरे में महसूस किया तो आप की मुखालेफ़त में खड़े हो गये।

21- अँबिया और ज़िन्दगी के हर पहलू की इस्लाह

हमारा अक़ीदह है कि तमाम अदयाने ईलाही जो पैगम्बरों पर नाज़िल हुए मखसूसन इस्लाम यह सिर्फ़ फ़रदी ज़िन्दगी या मानवी व अखलाकी इस्लाह तक

ही महदूद नही थे बल्कि इन का मकसद इजतमई तौर पर इंसानी ज़िन्दगी के हर पहलू की इस्लाह कर के उन को कामयाबी अता करना था। यहाँ तक कि इंसान की रोज़ मर्रा की ज़िन्दगी में काम आने वाले बहुत से उलूम को भी लोगों ने अँबिया से ही सीखा है जिन में से कुछ के बारे में कुरआने करीम में भी इशारा मिलता है।

हमारा अक़ीदह है कि पैग़म्बराने खुदा का सब से अहम हदफ़ इंसानी समाज में अदालत को काइम करना था। “लक़द अरसलना रुसुलना बिलबय्यिनाति व अनज़लना मअहुम अलकिताबा व अलमीज़ाना लियकूमा अन्नासि बिलकिस्ति।” [60] यानी हम ने अपने रसूलों को रौशन दलीलों के साथ भेजा और उन पर आसमानी किताब व मीज़ान (हक़ को बातिल से पहचानना और आदिलाना क़वानीन) नाज़िल किये ताकि लोगों के दरमियान अदालत काइम करें।

22- क़ौमी व नस्ली बरतरी की नफ़ी

हमारा अक़ीदह है कि तमाम अँबिया-ए- इलाही मख़सूसन पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने किसी भी “नस्ली” या “क़ौमी” इम्तियाज़ को क़बूल नही किया। इन की नज़र में दुनिया के तमाम इंसान बराबर थे चाहे वह किसी भी ज़बान,नस्ल या क़ौम से

ताल्लुक रखते हों। कुरआन तमाम इंसानों को मुफ़ातब कर ते हुए कहता है कि “या अय्युहा अन्नासु इन्ना खलकना कुम मिन ज़करिन व उनसा व जअलना कुम शुउबन व क़बाइला लितअरफू इन्ना अकरमा कुम इन्दा अल्लाहि अतक्रा कुम ” यानी ऐ इंसानों हम ने तुम को एक मर्द और औरत से पैदा किया फिर हम ने तुम को क़बीलों में बाँट दिया ताकि तुम एक दूसरे को पहचानो (लेकिन यह बरतरी का पैमाना नहीं है) तुम में अल्लाह के नज़दीक वह मोहतरम है जो तक़वे में ज़्यादा है।

पैग़म्बरे इस्लाम (स.)की एक बहुत मशहूर हदीस है जो आप ने हज के दौरान सर ज़मीने मिना पर ऊँट पर सवार हो कर लोगों की तरफ़ रुख कर के इरशाद फ़रमाई थी “या अय्युहा अन्नासि अला इन्ना रब्बा कुम वाहिदिन व इन्ना अबा कुम वाहिदिन अला ला फ़ज़ला लिअर्बियिन अला अजमियिन ,व ला लिअजमियिन अला अर्बियिन ,व ला लिअसवदिन अला अहमरिन ,व ला लिअहमरिन अला असवदिन ,इल्ला बित्तक़वा ,अला हल बल्लग़तु ? क़ालू नअम ! क़ाला लियुबल्लिग़ अशसाहिदु अलगाइबा ”यानी ऐ लोगो जान लो कि तुम्हारा ख़ुदा एक है और तुम्हारे माँ बाप भी एक हैं,ना अर्बों को अजमियों पर बरतरी हासिल है न अजमियों को अर्बों पर, गोरों को कालों पर बरतरी है और न कालों को गोरों पर अगर किसी को किसी पर बरतरी है तो वह तक़वे के एतबार से है। फिर आप ने सवाल किया कि

क्या मैं ने अल्लाह के हुक्म को पहुँचा दिया है? सब ने कहा कि जी हाँ आप ने अल्लाह के हुक्म को पहुँचा दिया है। फिर आप ने फ़रमाया कि जो लोग यहाँ पर मौजूद है वह इस बात को उन लोगों तक भी पहुँचा दें जो यहाँ पर मौजूद नहीं है।

23- इस्लाम और इंसान की सरिश्त

हमारा अक़ीदह है कि अल्लाह, उसकी वहदानियत और अंबिया की तालीमात के उसूल पर इम़ान का मफ़हूम अज़ लिहाज़े फ़ितरत इजमाली तौर पर हर इंसान के अन्दर पाया जाता हैं। बस पैग़म्बरों ने यह काम किया कि दिल की ज़मीन में मौजूद इम़ान के इस बीज को वही के पानी से सींचा और इस के चारों तरफ़ जो शिके व इहेराफ़ की घास उग आई थी उस को उखाड़ कर बाहर फेंक दिया। “ फ़ितरता अल्लाहि अल्लती फ़तर अन्नासा अलैहा ला तबदीला लिखलकि अल्लाहि ज़ालिका अदीनु अलक़य्यिमु व लाकिन्ना अक्सरा अन्नासि ला यअलमूना। ”[61] यानी यह (अल्लाह का ख़ालिस आईन)वह सरिश्त है जिस पर अल्लाह ने तमाम इंसानों को पैदा किया है और अल्लाह की ख़िल्कत में कोई तबदीली नहीं है। (और यह फ़ितरत हर इंसान में पाई जाती है)यह आईन मज़बूत है मगर अक्सर लोग इस बारे में नहीं जानते।

इसी वजह से इंसान हर ज़माने में दीन से वाबस्ता रहे हैं। दुनिया के बड़े तारीख दाँ हज़रात का अकीदह यह है कि दुनिया में ला दीनी बहुत कम रही है और यह कहीं कहीं पाई जाती थी। यहाँ तक कि वह क़ौमे जो कई कई साल तक दीन मुखालिफ तबलीगात का सामना करते हुए जुल्म व जोर को बर्दाश्त करती रहीं उन को जैसे ही आज़ादी मिली वह फ़ौरन दीन की तरफ़ पलट गईं। लेकिन इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि गुज़िश्ता ज़माने में बहुत सी क़ौमों की समाजी सतह का बहुत नीचा होना इस बात का सबब बना कि उनके दीनी अक्काइद व आदाब व रसूम ख़ुराफ़ात से आलूदा हो गये और पैगम्बराने ख़ुदा का सब से अहम काम इंसान के आईना-ए-फ़ितरत से ख़ुराफ़ात के इसी ज़ंग को साफ़ करना था।

तीसरा हिस्सा

कुरआन और दिगर आसमानी किताबें

24- आसमानी किताबों के नज़ूल का फलसफा

हमारा अक्रीदह है कि अल्लाह ने आलमे इंसानियत की हिदायत के लिए बहुत सी आसमानी किताबें भेजी जैसे सुहुफ़े इब्राहीम, सुहुफ़े नूह, तौरात, इँजील और इन में सबसे जामे कुरआने करीम है। अगर यह किताबे नाज़िल न होती तो इंसान अल्लाह की मारफ़त और इबादत में बहुत सी ग़लतियों का शिकार हो जाता और उसूले तक़वा,अख़लाक़ व तरबीयत और समाजी क़ानून जैसी ज़रूरी चीज़ों से दूर ही रहता ।

यह आसमानी किताबें सरज़मीन दिल पर बाराने रहमत की तरह की बरसीं और दिल की ज़मीन में पड़े हुए अल्लाह की मारफ़त,तक़वे,अख़लाक़ और इल्म व हिकमत के बीज को नमू अता किया। “आमना अर्रसूलु बिमा उनज़िला इलैहि मिन रब्बिहि व अल मुमिन्ना कुल्ला आमना बिल्लाहि व मलाइकतिहि व कुतुबिहि व रुसूलिहि” [62] यानी पैग़म्बर पर जो अल्लाह की तरफ़ से नाज़िल हुआ वह उस पर ईमान लाये और मोमेनीन भी अल्लाह,उसके रसूल,उसके फ़रिशतों और उसकी किताबों पर ईमान लायें।

अफ़सोस है कि ज़माने के गुज़रने और जाहिल व नाअहल अफ़राद की दख़ालत की वजह से बहुत सी आसमानी किताबों में तहरीफ़ हुई और उन में बहुत सी ग़लत फ़िक्रें दाख़िल कर दी गई। लेकिन कुरआने करीम इस तहरीफ़ से महफूज़

रहते हुए हर ज़माने में आफ़ताब की तरह चमकता हुआ दिलों को रौशन करता रहा है।

“क़द जाआ कुम मिन अल्लाहि नूरून व किताबुन मुबीन यहदी बिहि अल्लाहु मन इत्तबअ रिज़वानहु सुबुला अस्सलामि।” [63]यानी अल्लाह की तरफ़ से तुम्हारे पास नूर और रौशन किताब आ चुकी है अल्लाह इस की बरकत से उन लोगो को जो उसकी ख़ुशनुदी से पैरवी करते हैं सलामत(सआदत) रास्तों की हिदायत करता है।

25- कुरआन पैग़म्बरे इस्लाम (स.) का सब से बड़ा मोज़ज़ा है।

हमारा अक़ादह है कि कुरआने करीम पैग़म्बरे इस्लाम (स.)का सब से बड़ा मोज़ज़ा है और यह फ़क़त फ़साहत व बलागत, शीरीन बयान और मअनी के रसा होने के एतबार से ही नहीं बल्कि और मुख्तलिफ़ जहत्तों से भी मोज़ज़ा है। और इन तमाम जिहात की शरह अक़ाइद व कलाम की किताबों में बयान कर दी गई है।

इसी वजह से हमारा अक़ीदह है कि दुनिया में कोई भी इसका जवाब नहीं ला सकता यहाँ तक कि लोग इसके एक सूरेह के मिस्ल कोई सूरेह नहीं ला सकते।

कुरआने करीम ने उन लोगों को जो इस के कलामे खुदा होने के बारे में शक व तरद्दुद में थे कई मर्तबा इस के मुक़ाबले की दावत दी मगर वह इस के मुक़ाबले की हिम्मत पैदा न कर सके। “कुल लइन इजतमअत अलइँसु व अलजिन्नु अला यातू बिमिस्लि हाज़ा अलकुरआनि ला यातूना बिमिस्लिहि व लव काना बअज़ु हुम लिबअज़िन ज़हीरन। ”[64] यानी कह दो कि अगर जिन्नात व इंसान मिल कर इस बात पर इत्फ़ाक़ करें कि कुरआन के मानिंद कोई किताब ले आयें तो भी इस की मिस्ल नही ला सकते चाहे वह आपस में इस काम में एक दूसरे की मदद ही क्यों न करें।

“व इन कुन्तुम फ़ी रैबिन मिन मा नज़ज़लना अला अबदिना फ़ातू बिसूरतिन मिन मिस्लिहि व अदउ शुहदाअ कुम मिन दूनि अल्लाहि इन कुन्तुम सादिक़ीन ”[65] यानी जो हम ने अपने बन्दे (रसूल)पर नाज़िल किया है अगर तुम इस में शक करते हो तो कम से कम इस की मिस्ल एक सूरह ले आओ और इस काम पर अल्लाह के अलावा अपने गवाहों को बुला लो अगर तुम सच्चे हो।

हमारा अक़ीदह है कि जैसे जैसे ज़माना गुज़रता जा रहा है कुरआन के एजाज़ के नुकात पुराने होने के बजाये और ज़्यादा रौशन होते जा रहे हैं और इस की अज़मत तमाम दुनिया के लोगों पर ज़ाहिर व आशकार हो रही है।

इमाम सादिक अलैहिस्सलाम ने एक हदीस में फ़रमाया है कि “इन्ना अल्लाहा तबारका व तआला लम यजअलहु लिज़मानिन दूना ज़मानिन व लिनासिन दूना नासिन फ़हुवा फ़ी कुल्लि ज़मानिन जदीदिन व इन्दा कुल्लि क़ौमिन गुज़ज़ इला यौमिल क्रियामति। ” [66] यानी अल्लाह ने कुरआने करीम को किसी खास ज़माने या किसी खास गिरोह से मखसूस नहीं किया है इसी वजह से यह हर ज़माने में नया और क्रियामत तक हर क़ौम के लिए तरो ताज़ा रहेगा।

26- कुरआन में तहरीफ़ नहीं

हमारा अक़ीदह यह है कि आज जो कुरआन उम्मतें मुस्लेमाँ के हाथों में है यह वही कुरआन है जो पैगम्बरे इस्लाम (स.)पर नाज़िल हुआ था। न इस में से कुछ कम हुआ है और न ही इस में कुछ बढ़ाया गया है।

पहले दिन से ही कातिबाने वही का एक बड़ा गिरोह आयतों के नाज़िल होने के बाद उन को लिखता था और मुसलमानों की ज़िम्मेदारी थी कि वह रात दिन इस को पढ़े और अपनी पँजगाना नमाज़ों में भी इस की तकरार करें । असहाब का एक बड़ा गिरोह आयाते कुरआन की आयतों को हिफ़ज़ करता था, हाफ़िज़ान व कारियाने

कुरआन का इस्लामी समाज में हमेशा ही एक अहम मकाम रहा है और आज भी है। यह सब बातें इस बात का सबब बनी कि कुरआने करीम में कोई मामूली सी भी तहरीफ भी वाक़ेअ न हो सकी।

इस के अलावा अल्लाह ने रोज़े क्रियामत तक इस की हिफ़ाज़त की ज़मानत ली है लिहाज़ा अल्लाह की ज़मानत के बाद इस में तहरीफ़ नामुमकिन है। “इन्ना नहनु नज़ज़लना अज़्ज़करा व इन्ना लहु लहाफ़िज़ूना।” [67] यानी हम ने ही कुरआन को नाज़िल किया है और हम ही इस की हिफ़ाज़त करते हैं।

तमाम उलमा-ए- इस्लाम चाहे वह सुन्नी हों या शिया इस बात पर मुत्तफ़िक़ हैं कि कुरआने करीम में कोई तहरीफ़ नहीं हुई है।दोनों तरफ़ के सिर्फ़ चन्द अफ़राद ही ऐसे हैं जिन्होंने कुरआने करीम में तहरीफ़ के वजूद को रिवायात के ज़रिये साबित कर ने की कोशिश की है। लेकिन दोनों ग़िरोह के जय्यद उलमा ने इस नज़रिये की तरदीद की है और तहरीफ़ से मुताल्लिक़ रिवायतों को जाली या फिर तहरीफ़े मअनवी से मुताल्लिक़ माना है। तहरीफ़े मअनवी यानी कुरआने करीम की आयतों की ग़लत तफ़सीर।

वह कोताह फ़िक्र अफ़राद जो कुरआने करीम की तहरीफ़ के बारे में मुसिर हैं, और शिया या सुन्नी गिरोह की तरफ़ तहरीफ़ की निस्बत देते हैं उनका नज़रिया दोनों मज़हबों के मशहूर व बुजुर्ग उलमा के नज़रियों के मुखालिफ़ है। यह लोग नादानी में कुरआने करीम पर वार करते हैं और ना रवाँ तअस्सुब की बिना पर इस अज़ीम आसमानी किताब के एतेबार को ही ज़ेरे सवाल ले आते हैं और अपने इस अमल के ज़रिये दुश्मन को तक़वियत पहुँचाते हैं।

कुरआने करीम की जम आवरी की तारीख़ को पढ़ ने से मालूम होता है कि पैग़म्बरे इस्लाम (स.)के ज़माने से ही मुस्लमानों ने कुरआने करीम की किताबत, हिफ़ज़, तिलावत व हिफ़ाज़त के फ़ोकुल आद्दा इँतज़ामात किये थे। खास तौर पर पहले दिन से ही कातिबाने वही का वुजूद हमारे लिए इस बात को रौशन कर देता है कि कुरआने करीम में तहरीफ़ ना मुमकिन है।

और यह भी कि इस मशहूर कुरआन के अलावा किसी दूसरे कुरआन का वुजूद नहीं पाया जाता। इसकी दलील बहुत रौशन है सब के लिए तहक़ीक़ का दरवाज़ा खुला हुआ है जिसका दिल चाहे तहक़ीक़ करे आज हमारे घरों में तमाम मसाजिद में और उमूमी किताब खानों में कुरआने करीम मौजूद है। यहाँ तक कि कुरआने करीम के कई सौ साल पहले लिखे गये ख़त्ती नुस्खे भी हमारे आजायब घरों में

मौजूद हैं जो इस बात की तस्दीक करते हैं कि यह वही कुरआन है जो आज तमाम इस्लामी मुमालिक में राइज हैं। आगर माज़ी में इन मसाइल पर तहक़ीक़ मुमकिन नही थी तो आज तो सब के लिए तहक़ीक़ का दरवाज़ा खुला हुआ है। एक मुख्तसर सी तहक़ीक़ के बाद इस ना रवाँ निस्बत का बेबुनियाद होना ज़ाहिर हो जाये गा।

“फ़बशिशर इबादि * अल्लज़ीना यसतमिऊना अलक़ौलाफ़

यत्तबिऊना अहसनहु[68]” यानी मेरे बन्दों को खुशख़बरी दो,उन बन्दो को जो बातों को सुन कर उन में नेक बातों की पैरवी करते हैं।

आज कल हमारे होजाते इल्मिया में उलूमे कुरआन एक वसी पैमाने पर पढ़ाया जा रहा है। और इन दुरूस में सब से अहम बहस अदमे तहरीफ़े कुरआने करीम है।
[69]

27-क़रआन व इँसान की माद्दी व मानवी ज़रूरतें।

वह तमाम चीज़ें जिन की इँसान को अपनी माद्दी व मानवी ज़िन्दगी में ज़रूरत है उन के उसूल कुरआने करीम में बयान कर दिये गये हैं। चाहे वह हुकूमत चलाने

के क़वानीन हों या सियासी मसाइल, दूसरे समाजों से राबते के मामलात हो या बा हम ज़िन्दगी बसर करने के उसूल, जंग व सुलह के के मसाइल हों या क़ज़ावत व इक्तेसाद के उसूल या इन के अलावा और कोई मामलात तमाम के क़वाइद कुल्लि को इस तरह बयान कर दिया गया है कि इन पर अमल पैरा होने से हमारी ज़िन्दगी की फ़ज़ा रौशन हो जाती है। “व नज़ज़ला अलैका अल किताबा तिबयानन लिक्ुल्लि शैइन व हुदन व रहमतन व बुशरा लिलमुस्लिमीना ”[70] यानी हमने इस किताब को आप पर नाज़िल किया जो तमाम चीज़ों को बयान करने वाली है और मुस्लमानों के लिए रहमत, हिदायत और बशारत है।

इसी बिना पर हमारा अक़ीदह है कि “इस्लाम ”“हुकूमत व सियासत से ” हर गिज़ जुदा नही है बल्कि मुस्लमानों को फ़रमान देता है कि ज़मामे हुकूमत को अपने हाथों में सँभालो और इस की मदद से इस्लाम की अरज़िशों को ज़िन्दा करे और इस्लामी समाज की इस तरह तरबियत हो कि आम लोग किस्त व अद्ल राह पर गामज़न हों यहाँ तक कि दोस्त व दुश्मन दोनों के बारे में अदालत से काम लें। “या अय्युहा अल्लज़ीना आमनु कून् क़वामीना बिलकिस्ति शुहदाआ लिल्लाहि व लव अला अनफुसिकुम अविल वालिदैनि व अल अकराबीना।” [71]यानी ऐ ईमान लाने वालो अद्ल व इँसाफ़ के साथ क्रियाम करो और अल्लाह के लिए गवाही दो चाहे यह गवाही खुद तुम्हारे या तुम्हारे वालदैन के या तुम्हारे अकरबा

के ही खिलाफ क्यों न हो। “व ला यजरि मन्ना कुम शनानु कौमिन अला अन ला तअदिलु एदिलु हुवा अकरबु लित्तकवा ” खबर दार किसी गिरोह की दुश्मनी तुम को इस बात पर आमादा न कर दे कि तुम इँसाफ को तर्क कर दो , इँसाफ करो कि यही तक़वे से करीब तर है।

28- तिलावत, तदब्बुर ,अमल

कुरआने करीम की तिलावत अफ़ज़ल तरीन इबादतों में से एक है और बहुत कम इबादते ऐसी हैं जो इसके पाये को पहुँचती हैं। क्यों कि यह इल्हाम बख़्श तिलावत कुरआने करीम में गौर व फ़िक्र का सबब बनती है और गौर व फ़िक्र नेक आमाल का सरचश्मा है।

कुरआने करीम पैग़म्बरे इस्लाम को मुखडातब करार देते हुए फ़रमाता है कि “कुम अललैला इल्ला क़लीला*निस्फ़हु अव उनकुस मिनहु क़लीला* अव ज़िद अलैहि व रत्तिल अल कुरआना तरतीला....”[72] यानी रात को उठो मगर ज़रा कम ,आधी रात या इस से भी कुछ कम,या कुछ ज़्यादा कर दो और कुरआन को ठहर ठहर कर गौर के साथ पढ़ो।

और कुरआने करीम तमाम मुस्लमानों को खिताब करते हुए फ़रमाता है कि “फ़इकरउ मा तयस्सरा मिन अलकुरआनि” [73] यानी जिस क़द्र मुमकिन हो कुरआन पढ़ा करो।

लेकिन उसी तरह जिस तरह कहा गया, कुरआन की तिलावत उस के मअना में ग़ौर व फ़िक्र का सबब बने और यह ग़ौर व फ़िक्र कुरआन के अहकामात पर अमल पैरा होने का सबब बने। “अफ़ला यतदब्बरूना अलकुरआना अम अला कुलूबिन अक़फ़ालुहा ”[74] क्या यह लोग कुरआन में तदब्बुर नहीं करते या इन के दिलों पर ताले पड़े हुए हैं। “व लक़द यस्सरना अलकुरआना लिज़िज़करि फ़हल मिन मदकिरिन[75]” और हम ने कुरआन को नसीहत के लिए आसान कर दिया तो क्या कोई नसीहत हासिल करने वाला है। “व हाज़ा किताबुन अनज़लनाहु मुबारकुन फ़इत्तबिउहु” [76] यानी हम ने जो यह किताब नाज़िल की है बड़ी बरकत वाली है, लिहाज़ा इस की पैरवी करो।

इस बिना पर जो लोग सिर्फ़ तिलावत व हिफ़ज़ पर किनाअत करते हैं और कुरआन पर “तदब्बुर” “अमल” नहीं करते अगरचे उन्होंने तीन रुक़नों में से एक रुक़न को तो अंजाम दिया लेकिन दो अहम रुक़नों को छोड़ दिया जिस के सबब बहुत बड़ा नुक़सान बर्दाशत करना पड़ा।

29-इनहेराफ़ी बहसे

हमारा मानना है कि मुस्लमानों को कुरआने करीम की आयात में तदब्बुर करने से रोकने के लिए हमेशा ही साज़िशें होती रही हैम इन साज़िशों के तहत कभी बनी उमय्यह व बनी अब्बास के दौरै हुकूमत में अल्लाह के कलाम के क़दीम या हादिस होने की बहसों को हवा दे कर मुस्लमानों को दो गिरोहों में तक्सीम कर दिया गया, जिस के सबब बहुत ज्यादा ख़ूरेजिया वुजूद में आई। जबकि आज हम सब जानते हैं कि इन बहसों में नज़ाअ असलन मुनासिब नहीं है। क्यों कि अगर अल्लाह के कलाम से हरूफ़ ,नक़्श ,किताबत व कागज़ मुराद है तो बेशक यह सब चीज़ें हादिस हैं और अगर इल्मे परवरदिगार में इसके मअना मुराद हैं तो ज़ाहिर है कि उसकी ज़ात की तरह यह भी क़दीम है। लेकिन सितमगर हुक्काम और ज़ालिम खलीफ़ाओं ने मुसलमानों को बरसों तक इस मस्ले में उलझाए रक्खा। और आज भी ऐसी ही साज़िशें हो रही है और इस के लिए दूसरे तरीके अपनाए जा रहे हैं ताकि मुस्लमानों को कुरआनी आयात पर तदब्बुर व अमल से रोका जा सके।

30- कुरआने करीम की तफ़्सीर के ज़वाबित

हमारा मानना है कि कुरआने करीम के अलफ़ाज़ को उनके लुग़वी व उफ़ी मअना में ही इस्तेमाल किया जाये,जब तक आयत में अलफ़ाज़ के दूसरे मअना में इस्तेमाल होने का कोई अक़ली या नक़ली करीना मौजूद न हो। (लेकिन मशकूक करीनों का सहारा लेने से बचना चाहिए और कुरआने करीम की आयात की तफ़सीर हद्स या गुमान की बिना पर नहीं करनी चाहिए।

जैसे कुरआने करीम फ़रमाता है कि “व मन काना फ़ी हाज़िहि आमा फ़हुवा फ़ी अलआख़िरति आमा” [77] यानी जो इस दुनिया में नाबीना रहा वह आख़ेरत में भी नाबीना ही रहे गा।

हमें यकीन है कि यहाँ पर “आमा” के लुग़वी मअना नाबीना मुराद नहीं हो सकते,इस लिए कि बहुत से नेक लोग ज़ाहेरन नाबीना थे,बल्कि यहाँ पर बातिनी कोर दिली व नाबीनाई ही मुराद है। यहाँ पर अक़ली करीने का वुजूद इस तफ़सीर का सबब है।

इसी तरह कुरआने करीम इस्लाम दुश्मन एक गिरोह के बारे में फ़रमा रहा है कि “सुम्मुन बुकमुन उमयुन फ़हुम ला यअक़ीलूना ”[78] यानी वह बहरे ,गूँगे और अन्धे हैं,इसी वजह से कोई बात नहीं समझ पाते।

यह बात रोज़े रौशन की तरह आशकार है कि वह ज़ाहिरी तौर पर अन्धे,बहरे और गूँगे नहीं थे बल्कि यह उन के बातिनी सिफ़ात थे। (यह तफ़्सीर हम करीना-ए-हालिया के मौजूद होने की वजह से करते हैं।)

इसी बिना पर कुरआने करीम की वह आयते जो अल्लाह तआला के बारे में कहती हैं कि “वल यदाहु मबसूसतानि ”[79] यानी अल्लाह के दोनों हाथ खुले हुए हैं। या “व इस्नइ अलफुलका बिआयुनिना” [80] यानी (ऐ नूह)हमारी आँखों के सामने किशती बनाओ।

इन आयात का मफ़हूम यह हर गिज़ नहीं है कि अल्लाह के आँख, कान और हाथ पाये जाते हैं और वह एक जिस्म है। क्यों कि हर जिस्म में अजज़ा पाये जाते हैं और उस को ज़मान, मकान व जहत की ज़रूरत होती है और आखिर कार वह फ़ना हो जाता है। अल्लाह इस से बरतर व बाला है कि उस में यह सिफ़तें पाई जायें। लिहाज़ा “यदाहु” यानी हाथों से मुराद अल्लाह की वह कुदरते कामिला है जो पूरे जहान को ज़ेरे नुफ़ूज़ किये है,और “आयुन” यानी आँखों से मुराद उसका इल्म है हर चीज़ की निस्बत।

इस बिना पर हम ऊपर बयान की गई ताबीरात को चाहे वह अल्लाह की सिफ़ात के बारे में हों या ग़ैरे सिफ़ात के बारे में अक़ली व नक़ली करीनों के बग़ैर क़बूल नहीं करते । क्यों कि तमाम दुनिया के सुखनवरों की रविश इन्हीं दो करीनों पर मुनहसिर रही है और कुरआने करीम ने इस रविश को क़बूल किया है। “व मा अरसलना मिन रुसुलिन इल्ला बिलिसानि क़ौमिहि” [81] यानी हमने जिन क़ौमों में रसूलों को भेजा उन्हीं क़ौमों की ज़बान अता कर के भेजा। लेकिन यह बात याद रहे कि यह करीने रौशन व यक़ीनी होने चाहिए, जैसे ऊपर भी बयान किया जा चुका है।

31- तफ़सीर बिराय के खतरात

हमारा अक़ीदह है कि कुरआने करीम के लिए सब से खतरनाक काम अपनी राय के मुताबिक़ तफ़सीर करना है। इस्लामी रिवायात में जहाँ इस काम को गुनाहे कबीरा से ताबीर किया गया है वहीं यह काम अल्लाह की बारगाह से दूरी का सबब भी बनता है। एकहदीस में बयान हुआ है कि अल्ला ने फ़रमाया कि “मा आमना बी मन फ़स्सरा बिरायिहि कलामी ”[82] यानी जो मेरे कलाम की तफ़सीर अपनी राय के मुताबिक़ करता है वह मुझ पर ईमान नहीं लाया। ज़ाहिर है कि अगर ईमान

सच्चा हो तो इंसान कलामे खुदा को उसी हालत में कबूल करेगा जिस हालत में है न यह कि उस को अपनी राय के मुताबिक ढालेगा।

सही बुखारी, तिरमिज़ी,निसाई और सुनने दावूद जैसी मशहूर किताबों में भी पैगम्बरे इस्लाम (स.)की यह हदीस मौजूद है कि “मन क़ाला फ़ी अलकुरआनि बिरायिहि अव बिमा ला यअलमु फ़लयतबव्वा मक़अदहु मिन अन्नारि ”[83] यानी जो कुरआन की तफ़्सीर अपनी राय से करे या ना जानते हुए भी कुरआन के बारे में कुछ कहे तो वह इस के लिए तैयार रहे कि उसका ठिकाना जहन्नम है।

तफ़्सीर बिरायि यानी अपने शख़्सी या गिरोही अक़ीदह या नज़रिये के मुताबिक कुरआने करीम के मअना करना और उस अक़ीदह को कुरआने करीम से ततबीक देना, जबकि उसके लिए कोई क़रीना या शाहिद मौजूद न हो। ऐसे अफ़राद दर वाक़े कुरआने करीम के ताबेअ नहीं हैं बल्कि वह चाहते हैं कि कुरआने करीम को अपना ताबे बनायें। अगर कुरआने करीम पर पूरा ईमान हो तो हर गिज़ ऐसा न करें।अगर कुरआने करीम में तफ़्सीर बिरायि का बाब खुल जाये तो यक़ीन है कि कुल्ली तौर पर कुरआन का ऐतेबार खत्म हो जाये गा, जिस का भी दिल चाहेगा वह अपनी पसंद से कुरआने करीम के मअना करेगा और अपरने बातिल अक़ीदों को कुरआने करीम से ततबीक देगा।

इस बिना पर तफ़्सीर बिराय यानी इल्में लुगत,अदबयाते अरब व अहले ज़बान के फ़हम ख़िलाफ़ कुरआने करीम की तफ़्सीर करना और अपने बातिल ख़यालात व गिरोही या शख़्सी खवाहिशात को कुरआन से तताबुक़ देना, कुरआने करीम की मानवी तहरीफ़ का सबब है।

तफ़्सीर बिराय की बहुत सी किस्में हैं। उन में से एक किस्म यह है कि इंसान किसी मोज़ू जैसे “शफ़ाअत” “तौहीद” “इमामत” वगैरह के लिए कुरआने करीम से सिर्फ़ उन आयतों का तो इँतेखाब कर ले जो उस की फ़िक्र से मेल खाती हों,और उन आयतों को नज़र अन्दाज़ कर दे जो उस की फ़िक्र से हमाहँग न हो,जब कि वह दूसरी आयात की तफ़्सीर भी कर सकती हों।

खुलासा यह कि जिस तरह कुरआने करीम के अलफ़ाज़ पर जमूद ,अक़ली व नक़ली मोतबर करीनों पर तवज्जोह न देना एक तरह का इनहेराफ़ है उसी तरह तफ़्सीर बिराय भी एक किस्म का इनहेराफ़ है और यह दोनों कुरआने करीम की अज़ीम तालीमात से दूरी का सबब है। इस बात पर तवज्जोह देना ज़रूरी है।

32- सुन्नत अल्लाह की किताब से निकली है।

हमारा अक्रीदह है कि कोई भी यह नहीं कह सकता है कि “कफ़ाना किताबा अल्लाहि ”हमें अल्लाह की किताब काफ़ी है और अहादीस व सुन्नते नबवी (जो कि तफ़सीर व कुरआने करीम के हक़ाइक़ को बयान करने , कुरआने करीम के नासिख-मँसूख व आमो खास को समझने और उसूल व फुरु में इस्लामी तालीमात को जानने का ज़रिया है।)की ज़रूरत नहीं है। “इस इबारत का मतलब यह नहीं है कि तारीख़ में ऐसा किसी ने नहीं कहा,बल्कि मतलब यह है कि कोई भी सुन्नत के बग़ैर तन्हा किताब के ज़रिये इस्लाम को समझने का दावा नहीं कर सकता ”
मुतरजिम।

क्यों कि कुरआने करीम की आयात ने पैग़म्बरे इस्लाम (स.)की सुन्नत को- चाहे वह लफ़ज़ी हो या अमली - मुसलमानों के लिए हुज्जत करार दिया है और आप की सुन्नत को इस्लाम के समझने व अहकाम के इस्तँबात के लिए एक असली मनबा माना है। “मा अता कुम अर्रसूलु फ़खुजुहु व मा नहा कुम अनहु फ़इन्तहू”
[84]रसूल जो तुम्हें दे ले लो (यानी जिस बात का हुक्म दे उसे अन्जाम दो)और जिस बात से मना करे उस से परहेज़ करो।

“व मा काना लिमुमिनिन व ला मुमिनतिन इज़ा कज़ा अल्लाहु व रसूलुहु
अमरन अन यकूना लहुम अलखियरतु मिन अमरि हिम व मन यअसी अल्लाहा व

रसूलहु फ़क़द ज़ल्ला ज़लालन मुबीनन।” [85]यानी किसी भी मोमिन मर्द या औरत को यह हक़ नहीं है कि जब किसी अम्र मे अल्लाह या उसका रसूल कोई फ़ैसला कर दें तो वह उस अम्र में अप ने इख़्तियार से काम करे और जो भी अल्लाह और उस के रसूल की नाफ़रमानी वह खिली हुई गुमराही में है।

जो सुन्नते पैग़म्बर(स.)की परवा नहीं करते दर हकीकत उन्हों ने कुरआने करीम को नज़र अँदाज़ कर दिया है। लेकिन सुन्नत के लिए ज़रूरी है कि वह मोतबर ज़राये से साबित हो,ऐसा नहीं है कि जिसने हज़रत की सीरत के मुताल्लिक़ जो कह दिया सब क़बूल कर लिया जाये।

हज़रत अली अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं कि “व लक़द कुज़िबा अला रसूलि अल्लाहि सल्ला अल्लाहु अलैहि व आलिहि वसल्लम- हत्ता कामा खतीबन फ़क़ाला मन कजबा अलैया मुताम्मदन फ़ल यतबच्वा मक़अदहु मिन अन्नारि ”[86] यानी पैग़म्बरे इस्लाम (स.)की ज़िन्दगी मे ही बहुत सी झूठी बातों को पैग़म्बर (स.)की तरफ़ निस्बत दी गई तो पैग़म्बरे इस्लाम (स.) खुत्बा देने के लिए खड़े हुए और फ़रमाया कि जो अमदन किसी झूठी बात को मेरी तरफ़ मनसूब करे,वह जहन्नम में अपने ठिकाने के लिए भी आमादह रहे।

इस मफ़हूम से मलती जुलती एक हदीस सही बुखारी में भी।[87]

33-सुन्नत आइम्मा-ए- अहले बैत (अलैहिम अस्सलाम)

हमारा अक़ीदह यह भी है कि पैग़म्बरे इस्लाम (स.)के फ़रमान के मुताबिक़ आइम्मा-ए- अहले बैत (अलैहम अस्सलाम)की अहादीस भी वाजिब उल इताअत हैं।
क्यों कि

क)मशहूर व मारुफ़ मुतावातिर हदीस जो अहले सुन्नत और शिया दोनों मज़हबों की अक्सर किताबों में बयान की गई है उस में भी इसी मअना की तस्वीह है। सही तरमिज़ी में पैग़म्बरे इस्लाम(स.)की यह हदीस मौजूद है कि आप ने फ़रमाया “या अय्युहा अन्नासु इन्नी क़द तरकतु फ़ी कुम मा इन अख़ज़तुम बिहि लन तज़िल्लू, किताबा अल्लाहि व इतरती अहला बैती ”[88]

ख)आइम्मा-ए- अहले बैत अलैहिम अस्सलाम ने अपनी तमाम हदीसों पैग़म्बरे इस्लाम(स.)से नक़ल की हैं। और फ़रमाया है कि जो कुछ हम बयान कर रहे हैं यह पैग़म्बर से हमारे बाप दादा के ज़रिये हम तक पहुँचा है।

हाँ पैगम्बरे इस्लाम (स.)ने अपनी हयाते तौयबा में ही मसलमानों के मुस्तकबिल व उन की मुश्किलात को अच्छी तरह महसूस कर लिया था लिहाजा उम्मत को उन के हल का तरीका बताया और फ़रमाया कि क्रियामत तक पेश आने वाली तमाम मुश्किलात का हल कुरआने करीम व अहले बैत अलैहिम अस्सलाम की पैरवी है।

क्या इतनी अहम और क़वी उस सनद हदीस को नज़र अन्दाज़ किया जा सकता है ?

इसी बिना पर हमारा अक़ीदह है कि अगर कुरआने करीम व अहले बैत अलैहिम अस्सलाम के मसले पर तवज्जोह दी जाती तो आज मुसलमान अक्राइद,तफ़सीर और फ़िक्रह की बाज़ मुश्किलात से रू बरू न होते ।

चौथा हिस्सा

क्रियामत व मौत के बाद की ज़िन्दगी

34- मआद (क्रियामत)के बगैर ज़िन्दगी बेमफ़हूम है।

हमारा अक़ीदह है कि मरने के बाद एक दिन तमाम इंसान ज़िन्दा होंगे और आमाल के हिसाब किताब के बाद नेक लोगों को जन्नत में व गुनाहगारों को दोज़ख में भेज दिया जायेगा और वह हमेशा वहीं पर रहे गें। “अल्लाहु ला इलाहा इल्ला हुवा लयजमअन्नाकुम इला यौमिल क्रियामति ला रैबा फ़ीहि।” [89] यानी अल्लाह के अलावा कोई माबूद नहीं है,यकीनन क्रियामत के दिन जिस में कोई शक नहीं है तुम सब को जमा करे गा।

“फ़अम्मा मन तगा * व आसरा अलहयाता अदुनिया * फ़इन्ना अलजहीमा हिया अलमावा * व अम्मा मन खाफ़ा मक़ामा रब्बिहि व नहा अन्नफ़सा अन अलहवा * फ़इन्ना अलजन्नता हिया अलमावा।” [90]यानी जिस ने सर कशी की और दुनिया की ज़िन्दगी को इख्तियार किया उसका ठिकाना जहन्नम है और जिस ने अपने रब के मक़ाम(अदालत)का खौफ़ पैदा किया और अपने नफ़स को खवाहिशात से रोका उसका ठिकाना जन्नत है।

हमारा अक्रीदह है कि यह दुनिया एक पुल है जिस से गुज़र कर इंसान आखेरत में पहुँच जाता है। या दूसरे अलफ़ाज़ में दुनिया आखेरत के लिए बज़ारे तिजारत है,या दुनिया आखेरत की खेती है।

हज़रत अली अलैहिस्सलाम दुनिया के बारे में फ़रमाते हैं कि “इन्ना अदुनिया दारु सिदक़िन लिमन सदकाहाव दारु ग़िनयिन लिमन तज़व्वदा मिनहा,व दारु मोएज़तिन लिमन इत्तअज़ा बिहा ,मस्जिदु अहिब्बाइ अल्लाहि व मुसल्ला मलाइकति अल्लाहि व महबितु वहयि अल्लाहि व मतजरु औलियाइ अल्लाहि ”[91] यानी दुनिया सच्चाई की जगह है उस के लिए जो दुनिया के साथ सच्ची रफ़्तार करे,.....और बेनियाज़ी की जगह है उस के लिए जो इस से ज़खीरा करे,और आगाही व बेदारी की जगह है उस के लिए जो इस से नसीहत हासिल करे, हुनिया दोस्ताने खुदा के लिए मस्जिद,मलाएका के लिए नमाज़ की जगह,अल्लाह की वही के नाज़िल होने का मक़ाम और औलिया-ए- खुदा की तिजारत का मकान है।

35-मआद की दलीलें रौशन हैं।

हमारा अक्रीदह है कि मआद की दलीलें बहुत रौशन हैं क्यों कि-

क)इस दुनिया की ज़िन्दगी इस बात की तरफ़ इशारा करती है कि ऐसा नही हो सकता कि यह दुनिया जिस में इंसान चन्द दिनों के लिए आता है, मुश्किलत के एक बहुत बड़े अम्बोह के दरमियान ज़िन्दगी बसर करता है और मर जाता है, इंसान की खिलकत का आखरी हदफ़ हो,“अफ़ाहसिब तुम अन्ना मा खलकना कुम अबसन व अन्ना कुम इलैनाला तुरजाऊना ”[92]यानी क्या तुम यह गुमान करते हो कि हम ने तुम्हें किसी मक़सद के बग़ैर पैदा किया और तुम हमारे पास पलट कर नही आओ गे। यह इस बात की तरफ़ इशारा है कि अगर मआद का वुजूद न हो तो इस दुनिया की ज़िन्दगी बे मक़सद है।

ख)अल्लाह का अद्ल इस बात का तक्राज़ा करता है कि नेक और बद लोग जो दुनिया में एक ही सफ़ में रहते हैं बल्कि अक्सर बदकार आगे निकल जाते हैं वह आपस में अलग हों और हर कोई अपने अपने आमाल की जज़ा या सज़ा पायें। “अम हसिबा अल्लज़ीना इजतरहू अस्सयिआति अन नजअला हुम कल्लज़ीना आमनु व अमलू अस्सालिहाति सवाअन महयाहुम व ममातु हुम साआ मा यहकुमूना ”[93] क्या बुराई इख़्तियार करने वालों ने यह ख़याल कर लिया है कि हम उन्हे ईमान लाने वालों और नेक अमल करने वालों के बराबर करार दें गे,कि सब की मौत व हयात एक जैसी हो,यह उन्होंने बहुत बुरा फ़ैसला किया है।

ग)अल्लाह की कभी खत्म न होने वाली रहमत इस बात का तकाज़ा करती है कि उसका फ़ैज़ और नेअमतेँ इंसान के मरने के बाद भी कतअ न हों बल्कि इस्तेदाद रखने वाले अफ़राद का तकामुल उसी तरह होता रहे। “कतबा अला नफ़सिहि अर्रहमता लयजमअन्ना कुम इला यौमिल क्रियामति लारौबा फ़ीहि ”[94] यानी अल्लाह ने अपने ऊपर रहमत को लाज़िम करार दे लिया है,वह तुम सब को क्रियामत के दिन इक़ठा करेगा जिस में शक की कोई गुँजाइश नहीं है।

जो अफ़राद मआद के बारे में शक करते हैं कुरआने करीम उन से कहता है कि कैसे मुमकिन है कि तुम मुर्दों को ज़िन्दा करने के सिलसिले में अल्लाह की कुदरत में शक करते हो। जबकि तुम को पहली बार भी उस ने ही पैदा किया है,बस जिस ने तुम्हें इब्तदा में खाक से पैदा किया है वही तुम्हे दूसरी ज़िन्दगी भी अता करेगा। “अफ़ाअयियना बिलखल्कि अलअव्वलि ,बल हु फ़ी लबसिन मिन खल्किन जदीदिन” [95] यानी क्या हम पहली खिल्कत से आजिज़ थे(कि क्रियामत की खिल्कत पर कादिर न हों)हर गिज़ नहीं, लेकिन वह (इन रौशन दलाइल के बावुजूद)नई खिल्कत की तरफ़ से शुब्हे में पड़े हुए हैं। “व ज़रबा लना मसलन व नसिया खल्कहु क़ाला मन युहयु अलइज़ामा व हिया रमीम* कुल युहयिहा अल्लज़ी अव्वला मर्रतिन व हुवा बिकुल्लि खल्किन अलीम” [96]वह हमारे सामने मिसालें पेश करता है,अपनी खिल्कत को भूल गया,कहता है कि इन बोसीदह हड्डियों को

कौन ज़िन्दा करेगा ,आप कह دیجीये इन को वही ज़िन्दा करेगा जिस ने इन्हें पहली मर्तबा खल्क किया था और वह हर मखलूक का बेहतर जान ने वाला है।

और इसके साथ साथ यह भी कि ज़मीनों आसमान की खिल्कत ज़्यादा अहम है या इनसान का पैदा करना !बस जो इस वसूअ जहान को इसकी तमाम शगुफ़्तगी के साथ खल्क करने पर कादिर है वह इंसान को मरने के बाद दुबारा ज़िन्दा करने पर भी कादिर है। “अवा लम यरव अन्ना अल्लाहा अल्लज़ी खलका अस्स,मावाति व अल अर्ज़ा व लम यअया बिखल्कि हिन्ना बिकादिरिन अला अन युहयि अलमौता बला इन्नहु अला कुल्लि शैइन कदीर” [97]यानी क्या वह नहीं जानते कि अल्लाह ने ज़मीन व आसमान को पैदा किया और वह उन को खल्क करने में आजिज़ नहीं था,बस वह मुर्दों को ज़िन्दा करने पर भी कादिर है बल्कि वह तो हर चीज़ पर कुदरत रखता है।

36- मआदे जिस्मानी

हमारा अक़ीदह है कि उस जहान(आख़ेरत)में सिर्फ़ इंसान की रूह ही नहीं बल्कि रूह व जिस्म दोनो उस पलटाये जायेंगे। क्यों कि इस जहान में जो कुछ भी

अन्जाम दिया गया है इसी जिस्म और रूह के ज़रिये अंजाम दिया गया है।
लिहाज़ा जज़ा या सज़ा में भी दोनो का ही हिस्सा होना चाहिए।

मआद से मरबूत कुरआने करीम की अक्सर आयात में मआदे जिस्मानी का ज़िक्र हुआ है। जैसे मआद पर ताज्जुब करने वाले मुखालेफ़ीन के जवाब में जो यह कहते थे कि इन बोसीदह हड्डियों को कौन जिन्दा करेगा ? कुरआने करीम फ़रमाता है कि “कुल युहयिहा अल्लज़ी अनशाअहा अक्वला मर्रतिन ”[98]यानी आप कह दीजिये कि इन्हें वही जिन्दा करेगा जिस ने इनको पहली बार ख़ल्क किया।

“अयहसबु अलइंसानु अन लन नजमआ इज़ामहु * बला क़ादिरीना अला अन नुसक्विया बनानहु।” [99]यानी क्या इंसान यह गुमान करता है कि हम उसकी (बोसीदह)हड्डियों को जमा(ज़िन्दा)नहीं करें गे ? हाँ हम तो यहाँ तक भी क़ादिर हैं कि उन की उँगलियों के (निशानात)को भी मुरत्तब करें(और उन को पहला हालत पर पलटा दें)।

यह और इन्हीं की मिस्ल दूसरी आयते मआदे जिस्मानी के बारे में सराहत करती हैं।

वह आयतें जो यह बयान करती हैं कि तुम अपनी कब्रों से उठाये जाओगे वह भी मआदे जिस्मानी को वज़ाहत से बयान करती हैं।

कुरआने करीम की मआद से मरबूत अक्सर आयात मआदे रूहानी व जिस्मानी की ही शरह बयान करती हैं।

37- मौत का बाद का अजीब आलम

हमारा अक़ीदह है कि वह चीज़े जो मौत के बाद उस जहान में क्रियामत, जन्नत, जहन्नम में रूनुमाँ होंगी हम इस महदूद दुनिया में उस से बाखबर नहीं हो सकते चूँकि वह हमारी फ़िक्र से बहुत बलन्द चीज़ें हैं। “फ़ला तअलमु नफ़सुन मा उखफ़िया लहुम मिन कुर्रति आयुनिन” [100] किसी नफ़स को मालूम नहीं है कि उस के लिए क्या क्या खुन्की-ए- चश्म का सामान छुपा कर रक्खा गया है जो उन के आमाल की जज़ा है।

पैग़म्बरे इस्लाम (स.)की एक मशहूर हदीस में इरशाद हुआ है कि “इन्ना अल्लाहा यकुलु आददतु लिइबादिया अस्सालिहीना मा ला ऐनुन राअत वला उज़नुन समिअत व ला खतरा अला कल्बि बशरिन।” [101] यानी अल्लाह तआला फ़रमाता

है कि मैंने अपने नेक बन्दों के लिए जो नेअमते आमदह की हैं वह ऐसी हैं कि न किसी आँख ने ऐसी नेअमते देखी हैं न किसी कान ने उनके बारे में सुना है और न किसी दिल में उन का तसव्वुर पैदा हुआ है।

हकीकत यह है कि हमारी मिसाल इस दुनिया में उस बच्चे की सी है जो अभी अपनी माँ के शिकम में है और पेट की महदूद फ़ज़ में ज़िन्दगी बसर कर रहा है। फ़र्ज़ करो कि अगर यह बच्चा जो अभी माँ के पेट में है अक़ल व शऊर भी रखता हो तो बाहर की दुनिया में मौजूद चमकता हुए सूरज दमकते हुए चाँद, फूलों के मनाज़िर, हवाओं के हल्के हल्के झोंकों, दरिया की मोजों की सदा जैसे मफ़ाहीम व हकाइक को दर्क नहीं कर सकता। बस यह दुनिया भी उस जहान के मुक़ाबिल माँ के पेट की तरह है। इस पर तवज्जोह करनी चाहिए।

38- मआद व आमाल नामें

हमारा अक़ीदह है कि क़ियामत के दिन हमारे आमाल नामे हमारे हाथों में सौंप दिये जायेंगे। नेक लोगों के नामा-ए-आमाल उन के दाहिने हाथ में और गुनाहगारों के नामा-ए-आमाल उनके बायें हाथ में दियो जायेंगे। जहाँ नेक लोग अपने नामा-ए-आमाल को देख कर खुश होंगे वहीं गुनाहगार अफ़राद अपने नामा-

ए-आमाल को देख कर रनजीदा होंगे। कुरआने करीम ने इस को इस तरह बयान फ़रमाया है। “फ़अम्मा मन उतिया किताबहु बियमिनिहि फ़यकूलु हाउमु इकरऊ किताबियहु * इन्नी ज़ननतु अन्नी मुलाकिन हिसाबियहु * फ़हुवा फ़ी ईशतिर राज़ियतिन*व अम्मा मन उतिया किताबहु बिशिमालिहि फ़

यकूलु या लयतनी लम उता किताबियहु।” [102] यानी जिस को नामा-ए-आमाल दाहिने हाथ में दिया जायेगा वह(खुशी से)सब से कहेगा कि (ऐ अहले महशर) ज़रा मेरा नामा-ए-आमाल तो पढ़ो , मुझे यकीन था कि मेरे आमाल का हिसाब मुझे मिलने वाला है, फिर वह पसंदीदा जिन्दगी में होगा। लेकिन जिसका नामा-ए-आमाल बायें हाथ में दिया जायेगा वह कहेगा कि काश यह नामा-ए-आमाल मुझे ना दिया जाता।

लेकिन यह बात कि नामा-ए-आमाल की नौय्यत क्या होगी ? वह कैसे लिखे जायेंगे कि किसी में उस से इंकार करने की ज़ुरत न होगी ? यह सब हमारे लिए रौशन नहीं है। जैसा कि पहले भी इशारा किया जा चुका है कि मआद व क्रियामत में कुछ ऐसी खसूसियतें हैं कि जिन के जुज़यात को इस दुनिया में समझना मुश्किल या ग़ैर मुमकिन है। लेकिन कुल्ली तौर पर सब मालूम है और इस से इंकार नहीं किया जा सकता।

39- क्रियामत में शुहूद व गवाह

हमारा अक़ीदह है कि क्रियामत में इस के इलावा कि अल्लाह हमारे तमाम आमाल पर शाहिद है कुछ गवाह भी हमारे आमाल पर गवाही देंगे जैसे हमारे हाथ पैर, हमारे बदन की खाल, ज़मीन जिस पर हम ने ज़िन्दगी बसर करते हैं और इस के इलावा भी बहुत से हमारे आमाल पर गवाह होंगे।

“अल यौमा नखतिमु अला अफ़वाहि हिम व तुकल्लिमुना अयदिहि व तशहदु अरजुलु हुम बिमा कानू यकसिबूना ”[103] यानी इस दिन (रोज़े क्रियामत) हम उन के मुँह पर मोहर लगा देंगे और उन के हाथ हम से बाते करेंगे। और उन के पैरों ने जो काम अन्जाम दिये हैं वह उन के बारे में गवाही देंगे।

“व क़ालू लिजुलुदि हिम लिमा शहिदतुम अलैना क़ालू अनतक़ना अल्लाहु अल्लज़ी अनतक़ा कुल्ला शैइन। ”[104] यानी वह लोग अपने बदन की खाल से कहेंगे कि हमारे खिलाफ़ गवाही क्यों दी ? तो उनको जवाब मिलेगा कि जो अल्लाह हर चीज़ में बोलने की सलाहियत पैदा करता है उस ने ही हम को बोलने ताक़त दी। (और हम को राज़ों के फ़ाश करने की जिम्मेदारी सौंपी)

“यौमाइज़िन तुहदिसु अखबारहा * बिअन्ना रब्बका अवहा लहा।” [105] यानी उस दिन ज़मीन अपनी खबरें बयान करेगी इस लिए कि आप के परवर दिगार ने उस पर वही की है(कि इस ज़िम्मेदारी को अन्जाम दे)

40-सिरात व मिज़ान

हम क्रियामत में “सिरात” व “मिज़ान” के वुजूद के काइल हैं। सिरात वह पुल है जो जहन्नम के ऊपर बनाया गया है और सब लोग उस के ऊपर से उबूर करेंगे। हाँ जन्नत का रास्ता जहन्नम के ऊपर से ही है। “व इन मिन कुम इल्ला वारिदुहा काना अला रब्बिका हतमन मक़ज़ियन *सुम्मा नुनज्जि अल्लज़ीना इत्तक़व व नज़रु अज़ज़लिमीना फ़ीहा जिसिय्यन ”[106]यानी और तुम सब (बदूने इस्तसना)जहन्नम में दाखिल होंगे यह तुम्हारे रब का हतमी फ़ैसला है। इस के बाद हम मुत्तकी अफ़राद को निजात दे देंगे और ज़ालेमीन को जहन्नम में ही छोड़ देंगे।।

इस खतरनाक पुल से गुज़रना इंसान के आमाल पर मुनहसिर है, जैसा कि हदीस में बयान हुआ है “मिन हु मन यमुरु मिसला अलबर्कि, मिन हुम मन यमुरु

मिस्ला अदवि अलफ़रसि, व मिन हुम मन यमुरु हबवन,व मिन हुम मन यमुरु मशयन,व मिन हुम मन यमुरु मुताअल्लिकन ,क़द ताखुज़ु अन्नारु मिनहु शैयन व ततरुकु शैयन।” [107]यानी कुछ लोग पुले सिरात से बिजली की तेज़ी से गुज़र जायेंगे, कुछ तेज़ रफ़्तार घोड़े की तरह, कुछ घुटनियों के बल, कुछ पैदल चलने वालों की तरह, कुछ लोग इस पर लटक कर गुज़रेंगे,आतिशे दोज़ख उन में से कुछ को ले लेगी और कुछ को छोड़ देगी।

“मीज़ान” इसके तो नाम से ही इस के मअना ज़ाहिर है।यह इंसानों के आमाल को परखने का एक वसीला है। हाँ उस दिन हमारे तमाम आमाल को तौला जायेगा और हर एक के वज़न व अरज़िश को आशकार किया जायेगा। “व नज़उ मवाज़ीना अलक़िस्ता लियौमि अलक़ियामति फ़ला तुज़लमु नफ़सा शैयन व इन काना मिस्क़ाला हब्बतिन मिन ख़रदलिन आतैना बिहा व कफ़ा बिना हासिबीना।” [108]यानी हम रोज़े क़ियामत इंसानों की तराज़ू काइम करेंगे और किसी पर मामूली सा जुल्म भी नहीं होगा,यहाँ तक कि अगर राई के एक दाने के वज़न के बराबर भी किसी की (नेकी या बदी) हुई तो हम उस को भी हाज़िर करेंगे और (उस को उस का बदला देंगे)और काफ़ी है कि हम हिसाब करने वाले होंगे।

“फ़अम्मा मन सकुलत मवाज़ीनहु फ़हुवा फ़ी ईशातिन राज़ियतिन *व अम्मा मन खफ़फ़त मवाज़ीनहु फ़उम्मुहु हावियतिन ”[109] यानी (उस दिन) जिस के आमाल का पलड़ा वज़नी होगा वह पसंदीदा ज़िन्दगी में होगा और जिस के आमाल का पलड़ा हल्का होगा उस का ठिकाना दोज़ख में होगा।

हाँ हमारा अक़ीदह यही है कि उस जहान में निजात व कामयाबी इंसान के आमाल पर मुन्हसिर हैं, न कि उसकी आरज़ुओं व तसव्वुरात पर। हर इंसान अपने आमाल के तहत गिरवी है और तक़वे व परेहज़गारी के बिना कोई भी किसी मक़ाम पर नहीं पहुँच सकता। “कुल्लु नफ़िसन बिमा कसबत रहिनतुन” [110] यानी हर नफ़स अपने आमाल में गिरवी है।

यह सिरात व मीज़ान के बारे में मुख़्तसर सी शरह(व्याख्या) थी, जबकि इन के जुजयात के बारे में हमें इल्म नहीं है। जैसा कि हम पहले भी कह चुके हैं कि आख़ेरत एक ऐसा जहान है जो इस दुनिया से जिस में हम ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं बहुत बरतर है। इस माद़ी दुनिया में कैद अफ़राद के लिए उस जहान के मफ़हूमों को समझना मुश्किल व ग़ैर मुमकिन है।

41- क्रियामत और शफ़ाअत

हमारा अकीदह है कि कियामत के दिन पैग़म्बर,आइम्मा-ए-मासूमीन और औलिया अल्लाह अल्लाह के इज़्ज से कुछ गुनाहगारों की शफ़ाअत करेंगे और वह अल्लाह की माफ़ी के मुस्तहक़ करार पायेंगे। लेकिन याद रखना चाहिए कि यह शफ़ाअत फ़क़त उन लोगों के लिए है जिन्होंने गुनाहों की ज़्यादाती की वजह से अल्लाह और औलिया अल्लाह से अपने राबते को क़तअ न किया हो। लिहाज़ा शफ़ाअत बेक़ैदव बन्द नहीं है बल्कि यह हमारे आमाल व नियत से मरबूत है। “वला यशफ़उना इल्ला लिमन इरतज़ा” [111] यानी वह फ़क़त उन की शफ़ाअत करेंगे जिन की शफ़ाअत से अल्लाह राज़ी होगा।

जैसा कि पहले भी इशारा किया जा चुका है कि “शफ़ाअत” इंसान की तरबीयत का एक तरीक़ा है और गुनाहगारों को गुनाहों से रोकने व औलिया अल्लाह से राबते को क़तअ न होने देने का एक वसीला है। इस के ज़रिये इंसान को पैग़ाम दिया जाता है कि अगर गुनाहों में गिरफ़तार हो गये हो तो फ़ौरन तौबा कर लो और आइन्दा गुनाह अंजाम न दो।

हमारा यकीन है कि “शफ़ाअते उज़मा” का मंसब रसूले अकरम (स.) से मख़सूस हैं और आप के बाद दूसरे तमाम पैग़म्बर व आइम्मा-ए-मासूमीन हत्ता

उलमा, शोहदा, मोमेनीने आरिफ़ व कामिल को हक्के शफ़ाअत हासिल है। और इस से भी बढ़ कर यह कि कुरआने करीम व आमाले सालेह भी कुछ लोगों की शफ़ाअत करेंगे।

इमामे सादिक़ अलैहिस्सलाम एक हदीस में फ़रमाते हैं कि “मा मिन अहदिन मिन अलअव्वलीना व अलआख़ीरीना इल्ला व हुवा यहताजु इला शफ़ाअति मुहम्मद (स.) यौमल क्रियामति।” [112] यानी अव्वलीन और आख़ेरीन में से कोई ऐसा नहीं है जो रोज़े क्रियामत मुहम्मद (स.)की शफ़ाअत का मोहताज न हो।

कनज़ुल उम्माल में पैग़म्बरे अकरम (स.)की एक हदीस है जिस में आप ने फ़रमाया कि “अशशुफ़ाआउ ख़मसतुन :]“अलकुरआनु व अर्रहमु व अलअमानतु व नबिय्यु कुम व अहलु बैति नबिय्यि कुम। ”[113] रोज़े क्रियामत पाँच शफ़ीअ होंगे : कुरआने करीम,सिलह रहम,अमानत,आप का नबी और आपके नबी के अहले बैत।

हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम एक हदीस में फ़रमाते हैं कि “इज़ काना यौमु अलक्रियामति बअसा अल्लाहु अलआलिमा व अलआबिदा, फ़इज़ा वक़फ़ा बैना यदा अल्लाहि अज़ज़ा व जल्ला कीला लिआबिदि इनतलिक़ इला अलजन्नति,व कीला लिलआलिमि क्रिफ़ तशफ़अ लिन्नासि बिहुस्नि तादीबिका लहुमा।” [114]

यानी क़ियामत के दिन अल्लाह आबिद व आलिम को उठाये गा,जब वह अल्लाह की बारगाह में खड़े होंगे तो आबिद से कहा जाये गा कि जन्नत में जाओ ! और आलिम से कहा जाये गा कि ठहरो, तुम ने जो लोगों की सही तरबीयत की है उस की खातिर तुम को यह हक़ है कि तुम लोगों की शफ़ाअत करो।

यह हदीस शफ़ाअत के फलसफ़े की तरफ़ एक लतीफ़ इशारा कर रही है।

42- आलमे बरज़ख

हमारा अक़ीदह है कि इस दुनिया और आख़ेरत के बीच एक और जहान है जिसे “बरज़ख़” कहते हैं।मरने के बाद हर इंसान की रूह क़ियामत तक इसी आलमे बरज़ख़ में रहती है। “व मिन वराइहिम बरज़खुन इला यौमि युबअसूना। [115]” और उन के पीछे (मौत के बाद)आलमे बरज़ख़ है जो क़ियामत के दिन तक जारी रहने वाला है

हमें उस जहान के जुज़यात के बारे में ज़्यादा इल्म नहीं है और न ही हम उस के बारे ज़्यादा जान ने की क़वत रखते हैं,अलबत्ता यह जानते हैं कि उन नेक व सालेह अफ़राद की रूहें जिन के मर्तबे बलन्द है(जैसे शोहदा की रूहों)उस जहान में

अल्लाह की नेअमतीं से माला माल रहते हैं। “व ला तहसाबन्ना अल्लज़ीना कुतिलू फ़ी सबीलि अल्लाहि अमवातन वल अहया इन्दा रब्बि हिम युरज़कूना।” [116] जो लोग राहे खुदा में शहीद हो गये उन के बारे में हर गिज़ यह खयाल न करना कि वह मर गये हैं, नही वह जिन्दा हैं और अपने रब की तरफ़ से रिज़क़ पाते हैं।

और इसी तरह से ज़ालिम, तागूत और उन के हामियों की रूहें उस जहान में अज़ाब में मुबतला रहती हैं। जिस तरह कुरआने करीम ने फ़िरोन व आले फ़िरोन के बारे में बयान फ़रमाया है कि “अन्नारु युअरज़ूना अलैहा गुदुव्वन व अशिय्यन व यौमा तकूमु अस्साअतु अदख़िलू आला फ़िरअवना अशद्दा अलअज़ाबा” [117] यानी उन का अज़ाब (बरज़ख़ में) आग (जहन्नम) है जिस में उन को सुबह शाम जलाया जाता है और जिस दिन क्रियामत वाक़े होगी उस दिन (फ़रमान) गिया जायेगा कि आले फ़िरोन को सख़्त तरीन अज़ाब में दाख़िल करो।

लेकिन वह तीसरा गिरोह जिन के गुनाह कम है न वह नेअमतीं पाने वालो में हैं और न अज़ाब भुगत ने वालों में बल्कि वह लोग एक क्रिस्म की नींद में रहते हैं और रोज़े क्रियामत बेदार हों गे। “व यौमा तकूमु अस्सअतु युक्रसिमु अलमुजरिमूना मा लबिसू गैरा साअतिनव काला अल्लज़ीना ऊतुल इल्मा व अलईमाना लक़द लबिसतुम फ़ी किताबि अल्लाहि इला यौमि अलबअसि फ़हाज़ा यौमु

अलबअसि व लकिन्ना कुम कुन्तुम ला तअलमूना।” [118] यानी जिस दिन क्रियामत बरपा होगी उस दिन गुनाहगार लोग कसम खा-खा कर कहेंगे कि वह आलमें बरज़ख मे एक घन्टे से ज़्यादा नही रुके.....,और जिन लोगों को इल्म व ईमान दिया गया है वह गुनाहगारों को मुखातब करते हुए कहें गे कि तुम अल्लाह के हुक्म से क्रियामत तक (आलमे बरज़ख में)रहे हो,और आज रोज़े क्रियामत है लेकिन तुम को इस का इल्म नही है।

इस्लामी रिवायात में भी इस का ज़िक्र मौजूद है जैसे पैगम्बरे अकरम (स.)की हदीस है कि “अलकबरु रोज़तु मिन रियाज़िन जन्नति अव हुफ़रतु मिनहुफ़रि अन्निरानि। ”[119]कब्र या जन्नत के बाग़ों में से एक बाग़ है या फिर जहन्नम के गढ़ों में से एक गढ़।

43- मादी व मअनवी जज़ा

हमारा अक़ीदह है कि क्रियामत में मिलने वाली जज़ा में मादी और मानवी दोनों पहलु पाये जाते है,और वह इस लिए कि मआद भी रूहानी और जिस्मानी है। कुरआने करीम की आयात और इस्लामी रिवायात में भी इस का ज़िक्र हुआ है। जैसा कि जन्नत को बाग़ों के बारे में मिलता है कि उन के दरख़्तों के नीचे से

नहरे जारी हैं। “जन्नातिन तजरी मिन तहतिहा अलअनहारु” [120]यानी जन्नत के बाग़ ऐसे हैं जिन के नीचे नहरे जारी हैं। या जन्नत के दरख्तों के फ़लों व सायों के जावेदानी होने के बारे में कुरआने करीम फ़रमाता है कि “उकुलुहा दाइमुन व ज़िल्लुहा ”[121]यानी जन्नत के दरख्तों के फल व साये दाइमी हैं। या साहिबाने ईमान के लिए फ़रमाया कि जन्नत में उनके लिए अच्छे हमसर होंगे। “व अज़वाजुन मुतहहरतुन ”[122]यानी जन्नत में पाको पाकीज़ा हमसर होंगे। इसी तरह से और भी बहुत सी आयतें मौजूद हैं।

इसी तरह जहन्नम की जला डाल ने वाली आग और सख्त सज़ा के बारे में भी बयान मिलता है, जो उस जहान की माद्री सज़ा या जज़ा को रौशन करता है।

लेकिन इस से मुहिम मानवी जज़ा है, मारफ़ते अनवारे ईलाही व अल्लाह से रूह का तक्ररुब और उसके जमालो जलाल के जलवों में पाई जाने वाली लज़ज़त को बयान कर ने की सलाहियत किसी भी ज़बान में नहीं है।

कुरआने करीम की कुछ आयतों में जन्नत की माद्री नेअमतों को बयान कर ने के बाद इस जुमले को इज़ाफ़ा किया गया है “व रिज़वानु मिन अल्लाहि अकबरु

,ज़ालिका हुवा अलफ़ौज़ु अलअज़ीम ”[123]यानी अल्लाह की रिज़ा और खुशनूदी इन सब से बरतर है,और सब से बड़ी कामयाबी भी यही है।

हाँ इस से बढ़ कर कोई लज़ज़त नहीं है कि इंसान खुद यह महसूस करे कि वह अपने मअबूद व महबूब की बारगाह में क़बूल हो गया है और उस ने अपने रब की रिज़ा हासिल कर ली है।

हज़रत इमाम ज़ैनुल आबेदीन अली इब्नुल हुसैन अलैहिमा अस्सलाम फ़रमाते हैं कि “यकूलु (अल्लाह)तबारका व तआला रिज़ाया अन कुम व महब्बती लकुम ख़ैरु व आज़मु मिन मा अन्तुम फ़ीहि... ”[124] यानी अल्लाह तबारकु तआला उन से फ़रमाता है कि मेरा तुम से राज़ी होना और मेरा तुम से मुहब्बत करना इस से कहीं बेहतर है जिन नेअमत्तों के दरमियान तुम ज़िन्दगी बसर कर रहे हो। वह सब इन बातों को सुनते हैं और तसदीक करते हैं।

हक़ीकतन इस से बढ़ कर और क्या लज़ज़त हो सकती है कि अल्लाह इंसान को इस तरह ख़िताब फ़रमाये “या अय्यतुहा अन्नफ़सु अलमुतमइन्ना इरजई इला रब्बिकि राज़ियतन मरज़ियतन फ़उदखुली फ़ी इबादि व उदखुली जडन्नती ”[125] यानी ऐ नफ़से मुतमइन्ना अपने रब की तरफ़ पलट आ इस हाल में कि तू उस से

राजी और वह तुझ से राजी है बस मेरे बन्दों में दाखिल हो कर मेरी जन्नत में दाखिल हो जा।

पाँचवा हिस्सा

मस्ला-ए-इमामत

44- इमाम हमेशा मौजूद रहता है।

जिस तरह अल्लाह की हिकमत इस बात का तकाज़ा करती है कि इंसानों की हिदायत के लिए पैगम्बरों को भेजा जाये इसी तरह उस की हिकमत यह भी तकाज़ा करती है कि पैगम्बरों के बाद भी इंसान की हिदायत के लिए अल्लाह की तरफ से हर दौर में एक इमाम हो जो अल्लाह के दीन और पैगम्बरों की शरीयत की तहरीफ से महफूज़ रखे,हर ज़माने की ज़रूरतों से आगाह करे और लोगों को अल्लाह के दीन और पैगम्बरों के आइंन की तरफ बुलाये। अगर ऐसा न हो तो इंसान की खिल्कत का मक़सद जो कि तकामुल और सआदत है फ़ोत हो जाये

गा,इंसान की हिदायत के रास्ते बन्द हो जायेंगे,पैगम्बरों की शरीयत रायगाँ चली जायेगी और इंसान चारो तरफ़ भटकता फ़िरेगा।

इसी वजह से हमारा अक़ीदह यह है कि पैगम्बरे इस्लाम के बाद हर ज़माने में एक इमाम मौजूद रहा है। “या अय्युहा अल्लज़ीना आमिनु इत्तकु अल्लाह व कूनू माअस्सादीकीन ”[126]यानी ऐ ईमान लाने वालो अल्लाह से डरो और सादेकीन के साथ हो जाओ।

यह आयत किसी एक खास ज़माने से मखसूस नहीं है और बग़ैर किसी शर्त के सादेकीन की पैरवी का हुक्म इस बात पर दलालत करता है कि हर ज़माने के लिए एक मासूम इमाम होता है जिसकी पैरवी ज़रूरी है। बहुत से सुन्नी शिया उलमा ने अपनी तफ़्सीरों में इस बात की तरफ़ इशारा भी किया है। [127]

45-हकीकते इमामत

इमामत तन्हा ज़ाहिरी तौर पर हुक्मत करने का मंसब नहीं है बल्कि यह एक बहुत बलन्दो बाला रूहानी व मअनवी मंसब है। हुक्मते इस्लामी की रहबरी के इलावा दीनो दुनिया के तमाम उमूर में लोगो की हिदायत करना भी इमाम की

ज़िम्मेदारी में शामिल है। इमाम लोगों की रूही व फ़िक्री हिदायत करते हुए पैग़म्बरे इस्लाम(स.)की शरीयत को हर तरह की तहरीफ़ से बचाता है और पैग़म्बरे इस्लाम (स.)को जिन मक़ासिद के तहत मंबूस किया गया था उनको मुहक्क़ करता है।

यह वह बलन्द मंसब है,जो अल्लाह ने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को नबूवत व रिसालत की मनाज़िल तय करने के बाद,मुताद्दिद इम्तेहान ले कर अता किया और यह वह मंसब है जिस के लिए हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने दुआ की थी कि पालने वाले यह मंसब मेरी औलाद को भी अता करना और उन को इस दुआ का जवाब यह मिला कि यह मंसब ज़ालिमों और गुनाहगारों को नहीं मिल सकता। “व इज़ इबतला इब्राहीमा रब्बहु बिकलिमातिन फ़अतम्मा हुन्ना क़ाला इन्नी जाइलुका लिन्नासि इमामन क़ाला व मिन ज़ुरियति क़ाला ला यनाउलु अहदि अज़ज़ालिमीना ”[128]यानी उस वक़्त को याद करो जब इब्राहीम के रब ने चन्द कलमात के ज़रिये उनका इम्तेहान लिया और जब उन्होंने वह इम्तेहान तमाम कर दिया तो उन से कहा गया कि हम ने तुम को लोगों का इमाम बना दिया,जनाबे इब्राहीम ने अर्ज़ किया और मेरी औलाद ? (यानी मेरी औलाद को भी इमाम बनाना)अल्लाह ने फ़रमाया कि मेरा यह मंसब(इमामत) ज़ालिमों तक नहीं पहुँचता (यानी आप की ज़ुरियत में से सिर्फ़ मासूमीन को हासिल हो गा।

ज़ाहिर है कि इतना अज़ीम मंसब सिर्फ़ ज़ाहिरी हुकूमत तक महदूद नहीं है, और अगर इमामत की इस तरह तफ़्सीर न की जाये तो मज़कूरह आयत का कोई मफ़हूम ही बीकी नहीं रह जायेगा।

हमारा अक़ीदह है कि तमाम उलुल अज़म पैग़म्बर मंसबे इमामत पर फ़ाइज़ थे। उन्होंने अपनी जिस रिसालत का इबलाग़ किया उस को अपने अमल के ज़रिये मुहक्क़ किया, वह लोगों के मानवी व माद्वी और ज़ाहिरी व बातिनी रहबर रहे। मख़सूसन पैग़म्बरे इस्लाम (स.) अपनी नबूवत के आगाज़ से ही इमामत के अज़ीम मंसब पर भी फ़ाइज़ थे लिहाज़ उन के कामों को सिर्फ़ अल्लाह के पैग़ाम को पहुँचाने तक ही महदूद नहीं किया जा सकता।

हमारा अक़ीदा है कि पैग़म्बर (स.)के बाद सिलसिला-ए- इमामत आप की मासूम नस्ल में बाकी रहा। मस्ल-ए- इमामत के सिलसिले में ऊपर जो वज़ाहत की गई उस से यह बात ज़ाहिर हो जाती है कि इस मंसबे इमामत पर फ़ाइज़ होने के लिए शर्तें बहुत अहम हैं यानी असमत व इल्मो दानिश, तमाम मआरिफ़े दीनी का इहाता, हर ज़मान व मकान में इंसानों व उन की ज़रूरतों की शनाख़्त।

46-इमाम गुनाह व खता से मासूम होता है

इमाम के लिए ज़रूरी है कि वह खता व गुनाह से मासूम हो, क्योंकि ग़ैरे मासूम न बतौर कामिल मौरिदे एतेमाद बन सकता है और न ही उस से उसूले दीन व फ़रूए दीन को हासिल किया जा सकता है। इसी वजह से हमारा अक़ीदह है कि इमाम का “क़ौल ” “फ़ेअल ” व “तक़रीर ” हुज्जत है और दलीले शरई शुमार होते हैं। “तक़रीर” से मुराद यह है कि इमाम के सामने कोई काम अंजाम दिया जाये और इमाम उस काम को देखने के बाद उस से मना न करे तो इमाम की यह खामोशी इमाम की ताईद शुमार होती है।

47- इमाम शरियत का पासदार होता है।

हमारा अक़ीदह है कि इमाम अपने पास से कोई क़ानून या शरियत पेश नहीं करता बल्कि इमाम का काम पैग़म्बरे इस्लाम (स.)की शरियत की हिफ़ाज़, दीन की तबलीग़ व तालीम और लोगों को इस की तरफ़ हिदायत करना है।

48- इमाम इस्लाम को सबसे ज़्यादा जानने वाला होता है।

हमारा अक़ीदह है कि इमाम इस्लाम के तमाम उसूल व फ़रूए,अहकाम,क़वानीन,क़ुरआने करीम के मअना व तफ़सीर का मुकम्मल तौर पर आलिम होता है,और यह तमाम उलूम इमाम को अल्लाह की तरफ़ से हासिल होते हैं और पैग़म्बरे इस्लाम के वसीले से उन तक पहुँचते हैं।

हाँ ऐसा ही इल्म मुकम्मल तौर पर मौरिदे एतेमाद बन सकता है और इस के ज़रिये ही इस्लाम के हक़ाइक़ को समझा जा सकता है।

49- इमाम को मनसूस होना चाहिए

हमारा अक़ीदह है कि इमाम (पैग़म्बरे इस्लाम स. का जानशीन)मनसूस होना चाहिए। यानी इमाम का ताय्युन पैग़म्बरे इस्लाम(स.)की नस व तस्रीह के ज़रिये हो और इसी तरह हर इमाम की नस व तस्रीह अपने बाद वाले इमाम के लिए हो। दूसरे अल्फ़ाज़ में इमाम का ताय्युन भी पैग़म्बर की तरह अल्लाह की तरफ़ से (पैग़म्बर के ज़रिये) होता है। जैसा कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की इमामत के सिलसिले में क़ुरआने करीम में बयान किया गया है। “इन्नी जाइलुका लिन्नासि इमामन ” यानी मैंने तुम को लोगों का इमाम बनाया।

इस के इलावा असमत और इल्म का वह बलन्द दर्जा (जो किसी खता व गलती के बगैर तमाम अहकाम व तालीमात इलाही का इहाता किये हो)ऐसी चीजें हैं जिन से अल्लाह व उस के पैगम्बर के इलावा कोई आगाह नहीं है।

इस बिना पर हम आइम्मा-ए-मासूमीन अलैहिम अस्सलाम की इमामत को लोगों के इंतेखाब के ज़रिये नहीं मानते।

50- आइम्मा पैगम्बरे इस्लाम (स.)के ज़रिये मुऐय्यन हुए हैं।

हमारा अक्रीदह है कि पैगम्बरे इस्लाम (स.)ने अपने बाद के लिए इमामों को मुऐय्यन फ़रमाया है और एक मक़ाम पर बतौर उमूम मोरफ़ी कराई है।

सही मुस्लिम मे रिवायत है कि पैगम्बरे इस्लाम (स.)ने मक्के और मदीने के दरमियान “खुम” नामी सरज़मीन पर तवक्कुफ़ किया,एक खुत्बा बयान किया और उस के बाद फ़रमायाकि “मैं जल्द ही तुम लोगों के दरमियान से जाने वाला हूँ इन्नी तारिकुन फ़िकुम अस्सकलैन,अव्वलुहुमा किताबल्लाहि फ़ीहि अलहुदा व अन्नूरव अहला बैती ,उज़क्किर कुम अल्लाहा फ़ी अहलि बैति ” [129] यानी मैं तुम लोगों के दरमियान दो गराँ कद्र चीज़े छोड़ कर जा रहा हूँ इन में से एक अल्लाह

की किताब है जिस में नूर और हिदायत है.....और दूसरे मेरे अहले बैत हैं मैं तुम को वसीयत करता हूँ कि खुदारा मेरे अहले बैत को फ़रामोश न करना (इस जुम्ले को तीन बार तकरार किया)

यही मतलब सही तिरमिज़ी में भी बयान हुआ है और उसमें सराहत के साथ बयान किया गया है कि पैग़म्बरे इस्लाम ने फ़रमाया कि अगर इन दोनों के दामन से वाबस्ता रहे तो हर गिज़ गुमराह नहीं होंगे। [130]यह हदीस सुनने दारमी,खसाइसे निसाई,मुस्नदे अहमद व दिगर मशहूर किताबों में नक़ल हुई है। इस हदीस में कोई तरदीद नहीं है और हदीसे तवातुर शुमार होती है कोई भी मुसलमान इस हदीस से इंकार नहीं कर सकता। रिवायात में मिलता है कि पैग़म्बरे इस्लाम ने इस हदीस को सिर्फ़ एक बार ही नहीं बल्कि मुताद्विद मर्तबा मुख्तलिफ़ मौकों पर बयान फ़रमाया।

ज़ाहिर है कि पैग़म्बरे इस्लाम के तमाम अहले बैत तो कुरआन के साथ यह बलन्द व बाला मक़ाम हासिल नहीं कर सकते लिहाज़ा यह इशारा फ़क़त पैग़म्बरे इस्लाम (स.)की ज़ुरियत से आइम्मा-ए-मासूमीन अलैहिमु अस्सलाम की तरफ़ ही है। (कुछ ज़ईफ़ व मशकूक हदीसों में अहला बैती की जगह सुन्नती इस्तेमाल हुआ है।)

हम एक दूसरी हदीस के ज़रिये जो सही बुखारी,सही मुस्लिम,सही तिरमिज़ी,सही अबी दाऊद व मुसनदे हंबल जैसी मशहूर किताबों में नक़ल हुई है इस्तेनाद करते हैं कि पैग़म्बरे इस्लाम (स.)ने फ़रमाया कि “ला यज़ालु अद्दीनु काइमन हत्ता तकूमा अस्साअता अव यकूनु अलैकुम इस्नता अशरा खलीफ़तन कुल्लुहुम मिन कुरैश”[131] यानी दीने इस्लाम क्रियामत तक बाक़ी रहेगा यहाँ तक कि बारह खलीफ़ा तुम पर हुक्मत करेंगे और यह सब के सब कुरैश से होंगे।

हमारा अक़ीदह है कि इन रिवायतों के लिए उस अक़ीदेह के अलावा जो शिया इमामियह का बारह इमामों के बारे में पाया जाता है कोई दूसरी तफ़्सीर काबिले क़बूल नहीं है। ग़ौर करो कि क्या इस के अलावा भी और कोई तफ़्सीर हो सकती है।

51- हज़रत अली अलैहिस्सलाम पैग़म्बरे इस्लाम(स.)के ज़रिये नस्ब हुए।

हमारा अक़ीदह है कि पैग़म्बरे इस्लाम (स.)ने बहुत से मौक़ों पर हज़रत अली अलैहिस्सलाम को (अल्लाह के हुक्म से)अपने जानशीन की शक़ल में पहचनवाया है। खास तौर पर आखरी हज से लौटते वक़्त ग़दीरे खुम में असहाब के अज़ीम

मजमें में एक खुत्बा बयान फ़रमाया जिसका मशहूर जुम्ला है कि “अय्युहा अन्नास अलस्तु औवला बिकुम मिन अनफुसिकुम क़ालू बला ,क़ाला मन कुन्तु मौलाहु फ़अलीयुन मौलाहु ”[132] यानी ऐ लोगो क्या में तुम्हारे नफ़सों पर तुम से ज़्यादा हक़के तसरूफ़ नही रखता हूँ ? सबने एक जुट हो कर कहा हाँ आप हमारे नफ़सों पर हम से ज़्यादा हक़ रखते हैं। पैग़म्बर (स.)ने फ़रमाया बस जिस जिस का में मौला हूँ उस उस के अली मौला हैं।

क्यों कि हमारा मक़सद इस अक़ीदेह की दलीलें बयान करना या इस के बारे में बहस करना नही है इस लिए बस इतना कहते हैं कि न इस हदीस से सादगी के साथ गुज़रा जा सकता है और न ही यहाँ पर उस विलायत से दोस्ती व सीधी सादी मुहब्बत को मुराद लिया जा सकता है जिसको पैग़म्बरे इस्लाम (स.)ने इतने बड़े इंतज़ाम और तकीद के साथ बयान फ़रमाया हो।

क्या यह वही चीज़ नही है जिसको इब्ने असीर ने कामिल में लिखा है कि पैग़म्बरे इस्लाम (स.)ने इब्तदा-ए- कार में जब आयते “व अनज़िर अशीरतकल अकरबीना ” (यानी अपने करीबी रिश्तेदारों को डराओ।) नाज़िल हुई तो अपने रिश्तेदारों को जमा किया और उनके सामने इस्लाम को पेश किया और इसके बाद फ़रमाया “अय्युकुम युवाज़िरुनी अला हाज़ल अमि अला अन यकूना अखी व

वसिय्यी व खलीफती फ़ी कुम ” यानी तुम में से कौन हौ जो इस काम में मेरी मदद करे ताकि वह तुम्हारे दरमियान मेरा भाई,वसी व खलीफ़ा बने।

किसी ने भी पैग़म्बरे इस्लाम (स.)के इस सवाल का जवाब नही दिया,बस अली (अ)ही थे जिन्होंने कहा कि “अना या नबी अल्लाह अकूनु वज़ीरुका अलैहि” यानी ऐ अल्लाह के नबी इस काम में मैं आपकी मदद करूँगा।

पैग़म्बरे इस्लाम (स.)ने हज़रत अली अलैहिस्सलाम की तरफ़ इशारा किया और फ़रमाया “इन्ना हज़ा अखी व वसिय्यी व खलीफ़ती फ़ा कुम ”[133] यानी यह नौ जवान (अली अ.) तुम्हारे दरमियान मेरा भाई,मेरा वसी व मेरा खलीफ़ा है।

क्या यह वही मतलब नही है जिस के बारे में पैग़म्बरे इस्लाम अपनी उम्र के आख़री हिस्से में चाहते थे कि इसकी दूबारा ताकीद करें,और जैसा कि सही बुखारी में है कि आपने फ़रमाया “इतूनी अकतुबु लकुम किताबन लन तज़िल्लू बअदी अबदन” [134] यानी कलम व कागज़ लाओ मैं तुम्हारे लिए कुछ लिख दूँ ताकि तुम मेरे बाद हर गिज़ गुमराह न हो सको। हदीस के आख़िर में बयान हुआ है कि कुछ लोगों ने इस काम में पैग़म्बर (स.)की मुखालेफ़त की यहाँ तक कि पैग़म्बरे

इस्लाम (स.)को तौहीन आमेज़ बातें कहीं और आप जो लिखना चाहते थे वह आपको लिखने नहीं दिया गया।

हम इस बात की फिर तकरार करते हैं कि हमारा मक़सद मामूली से इस्तदलाल के साथ अक्राइद को बयान करना है। न कि इस के बारे में पूरी बहस करना वरना यह दूसरी शकल इख़्तियार कर लेगी।

52-हर इमाम की अपने से बाद वाले इमाम के लिए ताकीद

हमारा अक़ीदह है कि बारह इमामों में से हर इमाम इमाम के लिए उन से पहले इमाम ने ताकीद फ़रमाई है। इन में से पहले इमाम हज़रत अली अलैहिस्सलाम उनके बाद उन के दोनों बेटे हज़रत इमाम हसने मुजतबा (अ.) व हज़रत इमाम हुसैन सैय्यदुश शौहदा (अ.) उनके बाद उन के बेटे हज़रत इमाम अली बिन हुसैन (अ.) उन के बाद उन के बेटे हज़रत इमाम मुहम्मद बाकिर (अ.) उन के बाद उन के बेटे हज़रत इमाम जअफ़र सादिक (अ.) उन के बाद उन के बेटे हज़रत इमाम मूसा काज़िम (अ.) उन के बाद उन के बेटे हज़रत इमाम अली रिज़ा (अ.) उन के बाद उन के बेटे हज़रत इमाम मुहम्मद तकी (अ.) उनके बाद उन के बेटे हज़रत अली नकी (अ.) उनके बाद उन के बेटे हज़रत इमाम हसन अस्करी (अ.) उनके बाद

उन के बेटे हज़रत महदी अलैहिस्सलाम हैं और उन के लिए हमारा अक़ीदह है कि वह ज़िन्दा हैं।

अलबत्ता हज़रत महदी (अज.)के वुजूद के -जो कि इस दुनिया को अद्ल व इंसाफ़ से भरेंगे जिस तरह यह जुल्म व सितम से भर चुकी होगी- सिर्फ़ हम ही मोतक़िद नहीं हैं बल्कि उन पर तमाम मुस्लमानों का अक़ीदह है। कुछ सुन्नी उलमा ने महदी (अज)की रिवायतों के मुतावातिर होने के बारे में किताबें भी लिखी हैं। यहाँ तक कि कुछ साल पहले “राबिततुल आलमुल इस्लामी” की तरफ़ से शाये होने वाले एक रिसाले में हज़रत महदी के वुजूद से मरबूत पूछे गये एक सवाल के जवाब में लिखा गया कि महदी (अज)का ज़हूर मुसल्लम है। और इसके लिए हज़रत महदी (अज)से मरबूत पैग़म्बर (स.)की हदीसों को बहुत सी मशहूर किताबों से नक़ल किया।[135] कुछ लोग हज़रत महदी अलैहिस्सलाम के बारे में यह अक़ीदह रखते हैं कि वह आखिरी ज़माने में पैदा होंगे।

लेकिन हमारा अक़ीदह है कि वह बीरहवें इमाम हैं और अभी तक ज़िन्दा हैं और जब अल्लाह चाहेगा वह उस के हुक्म से ज़मीन को जुल्म व सितम से पाक करने व अदले इलाही की हुक्मत काइम करने के लिए क़ियाम करेंगे।

53- हज़रत अली अलैहिस्सलाम तमाम सहाबा से अफ़ज़ल थे।

हमारा अक़ीदह है कि हज़रत अली अलैहिस्सलाम तमाम सहाबा से अफ़ज़ल थे और पैग़म्बरे इस्लाम के बाद उम्मतु इस्लामी में उनको औलवियत हासिल थी। लेकिन इन सब के बावजूद उन के बारे में हर तरह के गुलू को हराम मानते हैं। हमारा अक़ीदह है कि जो हज़रत अली अलैहिस्सलाम की खुदाई या इस से मुशाबेह किसी दूसरी चीज़ के काइल हैं वह काफ़िर हैं और इस्लाम से खारिज हैं और हम उन के अक़ीदे से बेज़ार हैं। अफ़सोस है कि उन का नाम शियों के नाम के साथ लिया जाता है जिस से बहुत से इस बारे में बहुत सी ग़लत फ़हमियाँ पैदा हो गई हैं। जबकि उलमा-ए-शिया इमामियह ने अपनी किताबों में इस ग़िरोह को खारिज अज़ इस्लाम ऐलान किया है।

54- सहाबा अक़ल व तारीख़ की दावरी में

हमारा अक़ीदह है कि पैग़म्बरे इस्लाम के असहाब में बहुत से लोग बड़े फ़िदाकार बुजुर्ग़ मर्तबा व बाशख़िसयत थे। कुरआने करीम व इस्लामी रिवायतों में उनकी फ़ज़ीलतो का ज़िक्र मौजूद हैं। लेकिन इस का मतलब यह नहीं है कि पैग़म्बर इस्लाम (स.)के तमाम साथियों को मासूम मान लिया जाये और उनके तमाम

आमाल को सही तस्लीम कर लिया जाये। क्यों कि कुरआने करीम ने बहुत सी आयतों में (जैसे सूरए बराअत की आयतें,सूरए नूर व सूरए मुनाफ़ेकून की आयतें) मुनाफ़ेकीन के बारे में बातें की हैं जबकि यह मुनाफ़ेकीन ज़ाहेरन पैग़म्बर इस्लाम(स.)के असहाब ही शुमार होते थे जबकि कुरआने करीम ने उनकी बहुत मज़म्मत की है। कुछ असहाब ऐसे थे जिन्होंने पैग़म्बरे इस्लाम के बाद मुस्लमानों के दरमियान जंग की आग को भड़काया,इमामे वक़्त व खलीफ़ा से अपनी बैअत को तोड़ा और हज़ारों मुसलमानों का खून बहाया। क्या इन सब के बावजूद भी हम सब सहाबा को हर तरह से पाक व मुनज़्जह मान सकते हैं ?

दूसरे अलफ़ाज़ में जंग करने वाले दोनों गिरोहों को किस तरह पाक मान जा सकता है(मसलन जंगे जमल व जंगे सिफ़ीन के दोनों गिरोहों को पाक नहीं माना जा सकता) क्यों कि यह तज़ाद है और यह हमारे नज़दीक़ काबिले क़बूल नहीं है। वह लोग जो इस की तौजीह में “इज्तेहाद” को मोज़ू बनाते हैं और उस पर तकिया करते हुए कहते हैं कि दोनों गिरोहों में से एक हक़ पर था और दूसरा ग़लती पर लेकिन चूँकि दोनों ने अपने अपने इज्तेहाद से काम लिया लिहाज़ा अल्लाह के नज़दीक़ दोनो माज़ूर ही नहीं बल्कि सवाब के हक़दार हैं,हम इस कौल को तसलीम नहीं करते।

इज्तेहाद को बहाना बना कर पैगम्बरे इस्लाम (स.)के जानशीन से बैअत तोड़ कर,आतिशे जंग को भड़का कर बेगुनाहों का खून किस तरह बहाया जा सकता है। अगर इन तमाम खूँरेज़ियों की इज्तेहाद के ज़रिये तौजीह की जा सकती है तो फिर कौनसा काम बचता है जिसकी तौजीह नहीं हो सकती।

हम वाज़ेह तौर पर कहते हैं कि हमारा अक्कीदह यह है कि तमाम इंसान यहाँ तक कि पैगम्बरे इस्लाम (सल.)के असहाब भी अपने आमाल के तहत हैं और कुरआने करीम की कसौटी “इन्ना अकरमा कुम इन्दा अल्लाहि अतक्रा कुम” [136](यानी तुम में अल्लाह के नज़दीक वह गरामी है जो तक़वे में ज़्यादा है।)उन पर भी सादिक आती है। लिहाज़ा हमें उनका मक़ाम उनके आमाल के मुताबिक़ तैय करना चाहिए और इस तरह हमें मंतक़ी तौर पर उन के बारे में कोई फ़ैसला करना चाहिए। लिहाज़ा हमें कहना चाहिए कि वह लोग जो पैगम्बरे इस्लाम (स.)के ज़माने में मुखलिस असहाब की सफ़ में थे और पैगम्बरे इस्लाम (स.)के बाद भी इस्लाम की हिफ़ाज़त की कोशिश करते रहे और कुरआन के साथ किये गये अपने पैमान को वफ़ा करते रहे उन्हें अच्छा मान ना चाहिए और उनकी इज़ज़त करनी चाहिए।

और वह लोग जो पैगम्बरे इस्लाम(स.)के ज़माने में मुनाफ़ेकीन की सफ़ में थे और हमेशा ऐसे काम अंजाम देते थे जिन से पैगम्बरे इस्लाम (स.)का दिल रंजीदा

होता था। या जिन्होंने पैगम्बरे इस्लाम(स.)के बाद अपने रास्ते को बदल दिया और ऐसे काम अंजाम दिये जो इस्लाम और मुसलमानों के नुकसान दे साबित हुए,ऐसे लोगों से मुहब्बत न की जाये। कुरआने करीम फ़रमाता है कि “ला तजिदु क़ौमन युमिन्ना बिल्लाहि वअलयौमिल आखिरि युआद्ना मन हाद्दा अल्लाहा व रसूलहु व लव कान् आबाअहुम अव अबनाअहुम अव इखवानहुम अव अशीरतहुम ऊलाइका कतबा फ़ी कुलूबिहिम अलईमाना” [137] यानी तुम्हें कोई ऐसी क़ौम नहीं मिलेगी जो अल्लाह व आखिरत पर ईमान लेआने के बाद अल्लाह व उसके रसूल की नाफ़रमानी करने वालों से मुब्बत करती हो,चाहे वह (नाफ़रमानी करने वाले)उनके बाप दादा,बेटे,भाई या खानदान वाले ही क्यों न हो,यह वह लोग हैं जिनके दिलों में अल्लाह ने ईमान को लिख दिया है।

हाँ हमारा अक़ीदह यही है कि वह लोग जिन्होंने पैगम्बरे इस्लाम (स.)को उनकी ज़िन्दगी में या शहादत के बाद अज़ीयतें पहुँचाई है क़ाबिले तारीफ़ नहीं हैं।

लेकिन यह हर गिज़ नहीं भूलना चाहिए कि पैगम्बरे इस्लाम (स.)के कुछ आसहाब ने इस्लाम की तरक्की की राह में में बहुत कुरबानियाँ दी हैं और वह अल्लाह की तरफ़ से मदह के हक़ दार करार पायें हैं। इसी तरह वह लोग जो पैगम्बरे इस्लाम (स.)के बाद इस दुनिया में आयें या जो क़ियामत तक पैदा होंगे

अगर वह पैगम्बरे इस्लाम (स.)के सच्चे असहाब की राह पर चले तो वह भी लायके तारीफ़ हैं। कुरआने करीम फ़रमाता है कि “अस्साबिकूना अलअव्वलूना मीन अलमुहाजीरीना व अलअनसारि व अल्लज़ीना अत्तबऊ हुम बिएहसानिन रज़िया अल्लाहु अनहुम व रज़ू अनहु ” [138] यानी मुहाजेरीन व अनसार में से पहली बार आगे बढ़ने वाले और वह लोग जिन्होंने उनकी नेकियों में उनकी पैरवी की अल्लाह उन से राज़ी हो गया और वह अल्लाह से राज़ी हो गये।

यह पैगम्बरे इस्लाम (स.)के असहाब के बारे में हमारे अक़ीदेह का निचौड़ है।

55- आइम्मा-ए-अहले बैत (अ.)का इल्म पैगम्बर (स.)का इल्म है।

मुतावातिर रिवायात की बिना पर पैगम्बरे इस्लाम (स.)ने कुरआन व अहलेबैत अलैहिमुस् सलाम के बारे में हमें जो हुक्म दिया है कि इन दोनों के दामन से वाबस्ता रहना ताकि हिदायत पर रहो इस की बिना पर और इस बिना पर कि हम आइम्मा-ए- अहले बैत अलैहिमुस् सलाम को मासूम मानते हैं और उनके तमाम आमाल व अहादीस हमारे लिए संद व हुज्जत हैं ,इसी तरह उनकी तक़रीर भी (यानी उनके सामने कोई काम अंजाम दिया गया हो और उन्होंने उस से मना न किया हो) कुरआने करीम व पैगम्बरे इस्लाम (स.)की सीरत के बाद हमारे लिए फ़िक्ह का मंबा है।

और जब भी हम इस नुक्ते पर तवज्जोह करते हैं कि बहुत सी मोतेबर रिवायतों की बिना पर आइम्मा-ए- मासूमीन अलैहिमुस् सलाम ने फ़रमाया है कि हम जो कुछ बयान करते हैं सब कुछ पैग़म्बरे इस्लाम(स.)का बयान किया हुआ है जो हमारे बाप दादाओं के ज़रिये हम तक पहुँचा है। इस से यह बात ज़ाहिर हो जाती है कि इनकी रिवायतें पैग़म्बरे इस्लाम (स.)की रिवायतें हैं। और हम सब जानते हैं कि पैग़म्बरे इस्लाम (स.)से नक़ल की गई मौरिदे ऐतेमाद व सिका शख़्स की रिवायतें तमाम उलमा-ए- इस्लाम के नज़दीक काबिले क़बूल हैं।

इमाम मुहम्मद बाकिर अलैहिस्सलाम ने जाबिर से फ़रमाया है कि “या जाबिरु इन्ना लव कुन्ना नुहदिसुकुम बिरायना व हुवा अना लकुन्ना मीनल हासीकीना, व लाकिन्ना नुहदिसु कुम बिअहादीसा नकनिज़ुहा अन रसूलि अल्लाहि (स.)”[139] यानी ऐ जाबिर अगर हम अपनी मर्ज़ी से हवा-ए- नफ़स के तौर पर कोई हदीस तुम से बयान करें तो हलाक होने वालों में से हो जायेंगे। लेकिन हम तुम से वह हदीसों बयान करते हैं जो हम ने पैग़म्बरे इस्लाम (सल.)से ख़ज़ाने की तरह जमा की हैं।

इमाम सादिक अलैहिस्सलाम की एक हदीस में मिलता है कि किसी आप से सवाल किया आपने उसको उसके सवाल का जवाब अता किया वह इमाम से अपने नज़रिये को बदलने के लिए कहने लगा और आप से बहस करने लगा तो इमाम ने उस से फ़रमाया कि इन बातों को छोड़ "मा अजबतुका फ़ीहि मिन शैइन फ़हुवा अन रसूलिल्लाहि " यानी मैंने जो जवाब तुझ को दिया है इस में बहस की गुंजाइश नहीं है क्यों कि यह रसूलुल्लाह(स.)का बयान फ़रमाया हुआ है। [140]

अहम व काबिले तवज्जोह बात यह है कि हमारे पास हदीस की काफ़ी,तहज़ीब,इस्तबसार व मन ला यहजुरुहु अलफ़कीह बग़ैरह जैसी मोतबर किताबें मौजूद हैं। लेकिन इन किताबों के मोतबर होने का मतलब यह नहीं है कि जो रिवायतें इन में मौजूद हैं हम उन सब को क़बूल करते हैं। बल्कि इन रिवायतों को परखने के लिए हमारे पास इल्मे रिजाल की किताबें मौजूद हैं जिन में रावियों के तमाम हालात व सिलसिला-ए-सनद बयान किये गये हैं। हमारी नज़र में वही रिवायत काबिले क़बूल है जिस की सनद में तमाम रावी काबिले ऐतेमाद व सिक़ह हों। इस बिना पर अगर कोई रिवायत इन किताबों में भी हो और उसमें यह शर्तें न पाई जाती हों ते वह हमारे नज़दीक काबिले क़बूल नहीं है।

इस के अलावा ऐसा भी मुमकिन है कि किसी रिवायत का सिलसिला-ए-सनद सही हो लेकिन हमारे बुजुर्ग उलमा व फ़कीहों ने शुरू से ही उस को नज़र अंदाज़ करते हुए उस से परहेज़ किया हो (शायद उस में कुछ और कमज़ोरियाँ देखी हों)हम ऐसी रिवायतों को “मोरज़ अन्हा ”कहते हैं और ऐसी रिवायतों का हमारे यहाँ कोई एतेबार नहीं है।

यहाँ से यह बात रौशन हो जाती है कि जो लोग हमारे अक़ीदों को सिर्फ़ इन किताबों में मौजूद किसी रिवायत या रिवायतों का सहारा ले कर समझने की कोशिश करते हैं,इस बात की तहकीक़ किये बिना कि इस रिवायत की सनद सही है या ग़लत,तो उनका यह तरीका-ए-कार ग़लत है।

दूसरे लफ़्ज़ों में इस्लाम के कुछ मशहूर फ़िक्रों में कुछ किताबें पाई जाती हैं जिनको सही के नाम से जाना जाता है,जिनके लिखने वालों ने इन में बयान रिवायतों के सही होने की ज़मानत ली है और दूसरे लोग भी उनको सही ही समझते हैं। लेकिन हमारे यहाँ मोतबर किताबों का मतलब यह हर गिज़ नहीं है,बल्कि यह वह किताबें हैं जिनके लिखने वाले मोरिदे एतेमाद व बरजस्ता शख़िसयत के मालिक थे,लेकिन इन में बयान की गई रिवायात का सही होना इल्मे रिजाल की किताबों में मज़कूर रावियों के हालात की तहकीक़ पर मुनहसिर है।

ऊपर बयान की गई बात से हमारे अक्काअइद के बारे में उठने वाले बहुत से सवालों के जवाब खुद मिल गये होंगे। क्यों कि इस तरह की ग़फ़लत के सबब हमारे अक्काअइद को तशखीस देने में बहुत सी ग़लतियाँ की जाती हैं।

बहर हाल कुरआने करीम की आयात, पैग़म्बरे इस्लाम (स.)की रिवायात के बाद आइम्मा-ए- मासूमीन अलैहिमुस् सलाम की अहादीस हमारी नज़र में मोतबर है इस शर्त के साथ कि इन अहादीस का इमामों से सादिर होने मोतबर तरीकों से साबित हो।

छटा हिस्सा

मसाइले मुतफ़रिक्क

इस किताब के गुज़िश्ता हिस्सों में जो बहसों की गई हैं, वह उसूले दीन में हमारे अक्कीदों को रौशन करती है। हमारे अक्कीदों की कुछ और भी खुसूसयात है जो हम इस हिस्से में बयान कर रहे हैं।

56- हुस्न व कुब्हे अकली का मसअला

हमारा अक्रीदह है कि इंसान की अकल बहुत सी चीज़ों के हुस्न व कुब्ह (अच्छाई व बुराई)को समझती है। और यह उस ताकत की बरकत से है जो अल्लाह ने इंसान को अच्छे और बुरे में तमीज़ करने के लिए अता की है। यहाँ तक की आसमानी शरीयत के नुज़ूल से पहले भी इंसान के लिए मसाइल का कुछ हिस्सा अकल के ज़रिये रौशन था जैसे नेकी व अदालत की अच्छाई,जुल्म व सितम की बुराई,अखलाकी सिफ़ात जैसे सदाकत,अमानत,शुजाअत,सखावत और इन्हीं के मिस्ल दूसरी सिफ़तों की अच्छाईयाँ,इसी तरह झूट,खियानत,कंजूसी और इन्हीं के मानिंद दूसरे ऐबों की बुराईयाँ वगैरह ऐसे मसाइल हैं जिन को इंसान की अकल बहुत अच्छे तरीके से समझती है। अब रही यह बात कि अकल तमाम चीज़ों के हुस्न व कुब्ह को समझने की सलाहियत नही रखती और इंसान की मालूमात महदूद है,तो इस के लिए अल्लाह ने दीन,आसमानी किताबों व पैगम्बरों को भेजा ताकि वह इस काम को पूरा करें अकल जिस चीज़ को दर्क करती है उसकी ताईद करे और अकल जिन चीज़ों को समझने से आजिज़ है उनको रौशन करे।

अगर हम अकल की खुदमुखतारी को कुल्ली तौर पर मना करदें तो मस्ला-ए-तौहीद,खुदा शनासी,पैगम्बरों की बेअसत व आसमानी अदयान का मफ़हूम की खत्म

हो जाता है क्यों कि अल्लाह के वुजूद और अम्बिया की दवत की हक्कानियत का इसबात करना अक्ल के ज़रिये ही मुमकिन है। ज़ाहिर है कि शरीअत के तमाम फ़रमान उसी वक़्त काबिले क़बूल हैं जब यह दोनों मोजू (तौहीद व नबूवत)पहले अक्ल के ज़रिये साबित हों जायें और इन दोनों मोजू को तनहा शरीअत के ज़रिये साबित करना नामुमकिन है।

57- अद्ले इलाही

इसी बिना पर हम अल्लाह के अद्ल के मोतकिद हैं और कहते हैं कि यह मुहाल है कि अल्लाह अपने बन्दों पर जुल्म करे,किसी दलील के बग़ैर किसी को सज़ा दे या माफ़ कर दे,अपने वादे को वफ़ा न करे,किसी गुनाहगार व ख़ताकार इंसान को अपनी तरफ़ से मंसबे नबूवत मंसूब करे और अपने मोजज़ात उसके इख़्तियार में दे।

और यह भी मुहाल है कि उस ने अपने जिन बन्दों को राहे सआदत तैय करने के लिए ख़ल्क किया है,उन को किसी राहनुमा या रहबर के बग़ैर छोड़ दे। क्यों कि यह सब काम क़बीह (बुरे)हैं और अल्लाह के लिए बुरे काम अंजाम देना रवाँ नहीं हैं।

58- इंसान की आज़ादी

इसी बिना पर हमारा अक़ीदह यह है कि अल्लाह ने इंसान को आज़ाद पैदा किया है । इंसान अपने तमाम कामों को अपने इरादे व इख़्तियार के साथ अंजाम देता है। अगर हम इंसान के कामों में ज़ब्र के काईल हो जायें तो बुरे लोगों को सज़ा देना उन पर जुल्म, और नेक लोगों को इनआम देना एक बेहूदा काम शुमार होगा और यह काम अल्लाह की ज़ात से मुहाल है।

हम अपनी बात को कम करते हैं और सिर्फ़ यह कहते हैं कि हुस्न व कुब्हे अक़ली को क़बूल करना और इंसान की अक़ल को खुद मुख्तार मानना बहुत से हक़ाइक़, उसूले दीन व शरीअत, नबूवते अम्बिया व आसमानी किताबों के क़बूल के लिए ज़रूरी है। लेकिन जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि इंसान की समझने की सलाहियत व मालूमात महदूद है लिहाज़ा सिर्फ़ अक़ल के बल बूते पर उन तमाम हक़ाइक़ को समझना- जो उसकी सआदत व तकामुल से मरबूत हैं- मुमकिन नहीं है। इसी वजह से इंसान को तमाम हक़ाइक़ को समझने के लिए पैग़म्बरों व आसमानी किताबों की ज़रूरत है।

59- फ़िक्ह का एक आधार अक्ली दलील भी है

जो कुछ ऊपर बयान किया गया है उसकी बुनियाद पर हमारा अक्लीदह है कि दीने इस्लाम के असली मनाबे (आधारों)में से एक चीज़ अक्ली दलील भी है। अक्ली दलील से यहाँ पर यह मु़राद है कि पहले अक्ल किसी चीज़ को यक्नीनी तौर पर समझे फिर उसके बारे में फ़ैसला करे। मसलन फ़र्ज़ करो कि अगर किताब व सुन्नत में जुल्म व ख़ियानत, झूट, क़त्ल, माल को चुराने व दूसरों के हक़ को पामाल करने के हराम होने के बारे में कोई दलील मौजूद न होती तो हम अक्ल के ज़रिये इन कामों को हराम करार देते और यक्नीन करते कि आलिम व हकीम अल्लाह ने इन चीज़ों को हमारे लिए हराम करार दिया है और वह इन कामों को अंजाम देने पर हरगिज़ राज़ी नहीं है और यह हमारे लिए अल्लाह की एक हुज्जत होती।

कुरआने करीम ऐसी आयतों से पुर है जिन में अक्ल व अक्ली दलीलों की अहमियत को बयान किया गया है। जैसे- कुरआने करीम राहे तौहीद को तैय कराने के लिए साहिबाने अक्ल व फ़हम को ज़मीन व आसमान में मौजूद अल्लाह की आयतों पर ग़ौर करने की दावत देता है "इन्ना फ़ी ख़ल्कि अस्सलावाति व अलअर्जी व इख़्तिलाफ़ि अल्लैलि व अन्नहारि लआयातिन लिउलिल अलबाबि"

[141] यानी ज़मीन व आसमान की खिल्कत और दिन व रात के बदल ने में साहिबाने अक़ल के लिए बहुत सी निशानियाँ हैं।

दूसरी तरफ़ कुरआने करीम आयाते इलाही को बयान करने का मक़सद इंसान के अक़ल व फ़हम को बढ़ाना बता रहा है जैसे- “उनज़ुर कैफ़ा नुसरिफ़ु अलआयाति लअल्लाहुम यफ़क़हूना” [142] यानी देखो हम आयात को किस तरह मुख्तलिफ़ ताबीरों के साथ बयान करते हैं ताकि वह समझ जायें।

तीसरी तरफ़ कुरआने करीम तमाम इंसानों को नेकी व बदी में तमीज़ करने की दावत दे कर उन को ग़ौर व फ़िक्र की राह पर गामज़न कर रहा है। जैसे- “कुल हल यस्तवी अलआमा व अलबसीरो अफ़ला ततफ़क्करूना” [143] यानी क्या अंधे व देखने वाले (नादान व दाना)बराबर हैं क्या तुम फ़िक्र नहीं करते ?

इसी तरह से कुरआने करीम ने सबसे बुरा उन नफ़सों को कहा है जो न अपनी आँख,कान व ज़बान से काम लेते और नहीं अक़ल को काम में लाते। जैसे-“इन्ना शर्ी अद्ववाब्बि इन्दा अल्लाहि अस्सुम्मु अलबुकमु अल्लज़ीना ला याक्लूना ” [144] यानी अल्लाह के नज़दीक बदतरीन लोग गूँगे बहरे और अक़ल से काम न लेने वाले अफ़राद हैं।

और इसी तरह की बहुत सी आयतें हैं। लिहाज़ा इन सब के बावजूद इस्लाम के उसूल व फ़रूअ को समझने में अक़ल व फ़ि़क़्र को नज़र अनदाज़ नहीं किया जा सकता।

60-अदले इलाही

जैसे कि पहले इशारा किया जा चुका है कि अल्लाह के आदिल होने के काइल हैं और हमारा इस बात पर यकीन है कि अल्लाह अपने बन्दों पर किसी तरह का कोई जुल्म नहीं करता है। क्यों कि जुल्म एक बुरा काम है और अल्लाह तमाम बुरे कामों से पाक है। “व ला यज़लिमु रब्बुका अहदन” [1] यानी तुम्हारा रब किसी पर जुल्म नहीं करता।

अगर कोई इस दुनिया या आखिरत में किसी मुसीबत में गिरफ़्तार होता है तो वह खुद उसके आमाल का नतीजा होता है। “फ़मा काना अल्लाहु लियज़िलमा हुम व लाकिन कानू अनफ़ुसा हुम यज़लिमून” [2] यानी अल्लाह ने उन पर(वह गुज़िशता उम्मतें जो अल्लाह के अज़ाब में मुबतला हुईं) जुल्म नहीं किया बल्कि उन्होंने खुद अपने नफ़सों पर जुल्म किया।

अल्लाह सिर्फ़ इंसानों पर ही नहीं बल्कि इस दुनिया में मौजूद किसी भी चीज़ पर जुल्म नहीं करता “व मा अल्लाहु युरीदु जुलमन लिलआलमीना” [3] यानी अल्लाह किसी भी मौजूद पर जुल्म नहीं करना चाहता। यह तमाम अयतें हक़मे अक़ल की ताईद करती हैं।

तकलीफ़े मा ला युताक़ की नफ़ी

हमारा अक़ीदह है कि अल्लाह कभी भी इंसान को ऐसे काम का हुक़म नहीं देता जो उसकी सकत से बाहर हो “ला युकल्लिफ़ु अल्लाहु नफ़सन इल्ला वुसआहा” [4]

61- दर्द नाक हादसों का फ़लसफ़ा

हमारा अक़ीदह है कि वह दर्दनाक हादसे जो इस दुनिया में वाक़े होते हैं (जैसे ज़लज़ला, आसमानी या ज़मीनी बलाएँ वग़ैरह)

वह कभी अल्लाह की तरफ़ से सज़ा के तौर पर होते हैं जैसे जनाबे लूत की क़ौम के बारे में ज़िक़्र हुआ है “फ़लम्मा जाआ अमरुना जअलना आलियाहा साफ़िलहा व अमतरना अलैहिम हिजारतन मिन सिज्जीलिन मनज़ूदिन ”[5] यानी जब हमारा हुक़म(अज़ाब के लिए) पहुँचा तो हम ने उनके शहरों को ऊपर नीचे कर दिया और उन पर पत्थरों की बारिश की।

मुल्के “सबा” के नाशुक़े लोगों के बारे में फ़रमाया कि “फ़अरिज़ू फ़अरसलना अलैहिम सैला अलअरिमि ” यानी उन्होंने अल्लाह की इताअत से रूगरदानी की बस हमने उन को विरान करने वाले सैलाब में मुबतला कर दिया।

कभी यह हादसे इंसान को बेदार करने के लिए होते हैं ताकि वह राहे हक़ पर लौट आयें जैसे कि कुरआने करीम में इरशाद हुआ है ज़हर अलफ़सादु फ़ी अलबर्रि व अलबहरि बिमा कसबत अयदि अन्नासि लियुज़िकाहुम बअज़ा अल्लज़ी अमिलू लअल्लाहुम यरजिऊना” [6] यानी दरिया व खुशकी में जो तबाही फैली वह उन कामों की वजह से थी जो लोगों ने अंजाम दिये , अल्लाह यह चाहता है कि लोगों को उनके आमाल की सज़ा का एक छोटा सा हिस्सा चखाये शायद वह राहे हक़ की तरफ़ लौट आयें। बस दर्दनाक हादसों का यह हिस्सा दर असल अल्लाह का एक लुत्फ़ है।

कभी यह मुसीबतें खुद इंसान के अपने कामों की नतीजा होती हैं। “ इन्ना अल्लाहा ला युग़य्यिरु मा बिक़ौमिन हत्ता युग़य्यिरु मा बिअनफ़ुसिहिम ”[7] यानी अल्लाह किसी भी क़ौम की हालत को उस वक़्त तक नहीं बदलता जब तक वह खुद अपनी हालत न बदलें।

“मा असाबका मिन हसनतिन फ़मिन अल्लाहि व मा असाबका मिन सय्यिअतिन फ़मिन नफ़िसका” [8] जो अच्छाईया तुम को हासिल होती हैं वह

अल्लाह की तरफ़ से है और जो बुराईयाँ व मुश्किलें तुम्हारे सामने आती हैं वह खुद तुम्हारी तरफ़ से है।

62- दुनिया का निज़ाम बेहतरीन निज़ाम है।

हमारा अक़ीदह है कि इस दुनिया में जो निज़ाम मौजूद है वह बेहतरीन निज़ाम है और यही निज़ाम दुनिया पर हुक़म फ़रमा हो सकता है। इस निज़ाम में हर चीज़ एक हिसाब के तहत है और कोई भी चीज़ हक़, अदालत व नेकी के खिलाफ़ नहीं है। अगर इंसानी समाज में कोई बुराई पाई जाती है तो वह खुद इंसानों की तरफ़ से है।

हम इस बात की फिर तकरार कर दें कि हमारा अक़ीदह है कि इस्लामी जहान बीनी का असली पाया अद्ले इलाही है और अगर इसको मलहूजे खातिर न रखा जाये तो तौहीद, नबूवत व मआद खतरे में पड़ सकते हैं।

हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि “इन्ना असासा अदीनि अत्तौहीदु व अलअद्लु अम्मा अत्तौहीदु फ़अन ला तुजव्विज़ा अला रब्बिका मा जाज़ा अलैका , व अम्मा अल अद्लु फ़अन ला तनसिब इला ख़ालिक़िका मा लामका अलैहि ”[9] यानी दीन की बुनियाद तौहीद व अदालत पर है, तौहीद यह है

कि जो चीज़ तुम्हारे लिए रवा है उन को उस के लिए रवा न रखो(यानी उस के मुमकिनुल वुजूद के तमाम सिफ़ात से मुनज़ज़ह समझो) और अद्ल यह है कि उस अमल की अल्लाह की तरफ़ निसबत न दो जिस को अंजाम देने पर तुम्हारी मज़म्मत होती हो।

63- फ़िक्ह के चार आधार

जैसे कि पहले भी इशारा किया जा चुका है कि हमारी फ़िक्ह के चार मनाबे हैं।

1- कुरआने करीम , अल्लाह की यह किताब इस्लामी मआरिफ़ व अहकाम की असली सनद है।

2- पैग़म्बरे इस्लाम (स.) व आइम्मा-ए-मासूमीन अलैहिम अस्साम की सीरत।

3- उलमा व फ़ुक्हा का वह इजमा व इत्तेफ़ाक़ जो मासूमीन अलैहिमुस्सलाम की नज़र को ज़ाहिर करता हो।

4- अकली दलील और अकली दलील से हमारी मुराह दलीले अकली कतई है न कि दलीले अकले ज़न्नी क्यों कि दलीले अकली ज़न्नी जैसे क्रियास, इस्तेहसान वगैरह फ़िक्रही मसाइल में हमारे यहाँ काबिले कुबूल नहीं है। इसी वजह से हमारे यहाँ कोई भी फ़क़ही किसी ऐसे मस्ले में जिसके लिए कुरआन व सीरत में कोई सरीह हुकम मौजूद न हो अगर अपने गुमान में किसी मसलहत को पाता है तो उसको अल्लाह के हुकम के उनवान बयान नहीं कर सकता । इसी तरह से क्रियास व इसी की तरह की दूसरी ज़न्नी दलीलों के ज़रिये शरई अहकाम को समझना हमारे यहाँ जाइज़ नहीं है। लेकिन वह मवारिद जहाँ इंसान को यक़ीन पैदा हो जाये जैसे जुल्म, झूट, चोरी व ख़यानत के बुरे होने का यक़ीन, अकल का यह हुकम मोतबर है व “कुल्लु मा हकमा बिहि अलअकलु हकमा बिहि अश शरओ ” के तहत हुकमे शरीअत को बयान करने वाला है।

हकीकत यह है कि हमारे पास मुकल्लेफ़ीन के मोरिदे नियाज़ इबादी , सियासी, इक़तेसादी व इज्तेमाई अहकाम को हल करने के लिए पैग़म्बरे इस्लाम(स.) व आइम्मा-ए- मासूमीन अलैहिम अस्सलाम की फ़रवान अहादीस मौजूद है जिस की बिना पर हम को ज़न्नी दलीलों की पनाह लेने की ज़रूरत पेश नहीं आती। यहाँ तक कि “मसाइले मुस्तहदिसा” (वह नये मसाइल जो ज़माने के गुज़रने के साथ साथ इंसान की ज़िन्दगी में दाखिल हुए) के लिए भी किताब व सुन्नत में उसूल व

कुल्लियात बयान हुए हैं जो हम को इस तरह के ज़न्नी दलाइल के तवस्सुल से बेज़ार कर देते हैं। यानी इन अहकामे कुल्लियात की तरफ़ रुजूअ करने से नये मसाइल भी हल हो जाते हैं ।

नोट - इस छोटी सी किताब में इस बात को तौज़ीह के साथ बयान नहीं किया जा सकता। इस मसले को समझने के लिए किताब “मसाइलुल मस्तुहदिसा” को देखें। हम ने इस किताब में इस बात को रौशन तौर पर बयान किया है।

64- इजतेहाद का दरवाज़ा हमेशा खुला हुआ है।

हमारा मानना है कि शरीअत के तमाम मसाइल के लिए इजतेहाद का दरवाज़ा खुला हुआ है और सभी साहिबे नज़र फ़कीह ऊपर बयान किये गये चार मनाबों से अल्लाह के अहकाम को इस्तंबात कर के उन लोगों के हवाले कर सकते हैं जो अहकामे इलाही के इस्तंबात की कुदरत नहीं रखते। चाहे इन के नज़रिये पुराने फ़कीहों से मुताफ़ावित ही क्यों न हो। हमारा अक़ीदह है कि जो अफ़राद फ़िक्ह में साहिबे नज़र नहीं है उनको चाहिए कि किसी ज़िन्दा फ़कीही तक़लीद करे ऐसे ज़िन्दा फ़कीह की जो ज़मान व मकान के मसाइल से आगाह हो । फ़कीह की तरफ़ ग़ैरे फ़कीही का रुजूअ करना हमारे नज़दीक बदीहीयात में से है। हम इन

फ़कीहों को “मरआ-ए- तकलीद ” कहते हैं। हमारे नज़दीक इबतदाई तौर पर किसी मुर्दा फ़कीह की तकलीद भी जाइज़ नहीं है। अवाम के लिए ज़रूरी है कि वह किसी ज़िन्दा फ़कीह की तकलीद करें ताकि फ़िक्ह हमेशा हरकत में रहे और तकामुल की मंज़िले तैय करती रहे।

65- क़ानूनी ख़ला का वुजूद नहीं है

हमारा अक़ीदह है कि इस्लाम में किसी तरह का कोई क़ानूनी ख़ला नहीं पाया जाता।

यानी क्रियामत तक इंसान को पेश आने वाले तमाम अहकाम इस्लाम में बयान हो चुके हैं। यह अहकाम कभी मख़सूस तौर पर और कभी कुल्ली व आम तौर पर बयान किये गये हैं। इसी वजह से हम किसी फ़कीह को क़ानून बनाने का हक़ नहीं देते बल्कि उनको सिर्फ़ ऊपर बयान किये गये चारो मनाबों से अहकामे इलाही को इस्तख़राज कर के अवाम के सुपुर्द करने का हक़ हासिल है। हमारा अक़ीदह है कि तमाम अहकाम कुल्ली तौर पर बयान किये जा चुके हैं और इसकी दलील यह है कि सूरए मायदह जो कि पैग़म्बरे इस्लाम पर नाज़िल होने वाले आख़री सूरह या आख़री सूरह में से एक सूरह है इस में इरशाद हो रहा है “अल यौम अकमलतु

लकुम दीना कुम व अतममतु अलैकुम नेअमती व रज़ीतु लकुम अलइस्लामा दीनन
” [10]यानी आज हम ने तुम्हारे लिए दीन को कामिल कर दिया और तुम पर
अपनी नेअमतों को भी पूरा किया और तुम्हारे लिए दीने इस्लाम को मुंतखब
किया।

अगर हर ज़माने के लिए फ़िक्रही मसाइल बयान नहीं किये गये तो फिर दीन
किस तरह कामिल हो सकता है ?

क्या आखरी हज के मौके पर पैगम्बरे इसलाम (स.) ने नहीं फ़रमाया कि
“अय्युहा अन्नासु वल्लाहि मा मिन शैइन युकरिबु कुम मिन अलजन्नति व युबाइदु
कुम अन अन्नारि इल्ला व क़द अमरतु कुम बिहि , व मा मिन शैइन युकरिबु कुम
मिन अन्नारि व युबाइदु कुम अन अलजन्नति इल्ला व क़द नहैतुकुम अनहु।”

[11]यानी ऐ लोगो मैंने तुम को उन तमाम चीज़ों का अंजाम देने का हुक्म दे दिया
है जो तुम को जन्नत से नज़दीक व दोज़ख से दूर करने वाली है।और इसी तरह
मैंने तुम को उन तमाम कामों से मना कर दिया है जो तुम को जहन्नम की आग
से नज़दीक और जन्नत से दूर करने वाले हैं।

हज़रत इमाम सादिक अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि “मा तरका अलीयुन (अ) शैअन इल्ला कतबहु हत्ता अरशा अलखदशि” [12] यानी हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने अहकाम इस्लाम से किसी चीज़ को बग़ैर लिखे नहीं छोड़ा(आप ने पैगम्बरे इस्लाम(स.) के हुक्म से हर चीज़ को लिखा) यहाँ तक कि आप ने इंसान के बदन पर आने वाली एक छोटीसी खराश की दीयत को भी लिख दिया। इन सब की मौजूदगी में हम को ज़न्नी दलीलों, क्रियास व इस्तिहान की ज़रूरत पेश नहीं आती।

66-तक्रियेह का फ़लसफ़ा

हमारा अक़ीदेह है कि अगर कभी इंसान ऐसे मुतस्सिब लोगों के दरमियान फँस जाये जिन के सामने अपने अक़ीदेह को बयान करना जान के लिए खतरे का सबब हो तो ऐसी हालत में मोमिन की ज़िम्मेदारी यह है कि वह अपने अक़ीदेह को छुपा ले और अपनी जान की हिफ़ाज़त करे। हम इस काम को “तक्रियेह” का नाम देते हैं। इस अक़ीदेह के लिए हमारे पास कुरआने करीम की दो आयतें व अक़ली दलीलें मौजूद हैं।

कुरआने करीम मोमिने आले फिरौन के बारे में फ़रमाता है कि “व काला रजुलुन मोमिनुन मिन आलि फिरऔना यक्तुम ईमानहु अतकतुलूना अन यकूला रब्बिया अल्लाहु व क़द जाआ कुम बिलबय्यिनाति मिन रब्बि कुम” [13] यानी आले फिरौन के एक मोमिन मर्द ने जिसने अपने ईमान का छुपा रखा था कहा कि क्या तुम उस इंसान को क़त्ल करना चाहते हो जो यह कहता है कि अल्लाह मेरा रब है, जब कि वह तुम्हारे पास तुम्हारे परवरदिगार की तरफ़ से खुली हुई निशानियाँ लेकर आया है।

“यक्तुम ईमानहु ” तक़िय्यह के मसले के रौशन करता है। क्या यह सही था कि मोमिने आले फिरौन अपने ईमान को ज़ाहिर कर के अपनी जान से हाथ धो बैठता और काम को आगे न बढ़ाता ?

कुरआने करीम सद्दे इस्लाम के कुछ मुजाहिद मोमिनीन को जो कि मुशरिक दुश्मनो के पँजों में फँस गये थे उन्हें तक़िय्येह का हुक्म देते हुए फ़रमाता है कि “ला यत्तख़िज़ि अलमोमिनीना अलकाफ़िरीना औलिया मिन दूनि अलमोमिनीना व मन यफ़अल ज़लिक़ फ़लैसा मिन अल्लाहि फ़ी शैआन इल्ला अन तत्तकू मिन हुम तुक़ातन” [14]यानी मोमिनीन को चाहिए कि वह मोमिनीन को छोड़ कर किसी काफ़िर को अपना दोस्त या सरपरस्त न बनायें और अगर किसी ने ऐसा किया तो

समझो उसका राबता अल्लाह से कट गया। मगर यह कि (तुम खतरे में हो) और उन से तक़िय्यह करो।

इस बिना पर तक़य्या (यानी अपने अक़ीदेह को छुपाना) ऐसी हालत से मखसूस है जब मुतास्सिब दुश्मन के सामने इंसान का जान व माल खतरे में पड़ जाये। ऐसी हालत में मोमिनीन को अपनी जानों को खतरे में नहीं डालना चाहिए बल्कि उनकी हिफ़ाज़त करनी चाहिए । इसी वजह से हज़रत इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि “अत्तक़िय्यतु तुर्सुल मोमिनि ”[15] यानी तक़िय्यह मोमिन की ढाल है।

तक़िय्येह को तुर्स (ढाल) से ताबीर करना एक लतीफ़ ताबीर है जो इस बात की तरफ़ इशारा करती है कि तक़िय्यह दुश्मन के मुक़ाबिल एक दिफ़ाई वसीला है।

जनाबे अम्मारे यासिर का दुश्मनो के सामने तक़िय्यह करना और पैगम्बरे इस्लाम (स.) का उस को सही करार देना बहुत मशहूर वाक़िया है।[16]

मैदाने जंग में अपने सिपाहियों व हथियारों को छुपाना, दुश्मनों से जंगी राज़ों को छुपा कर रखना वगैरह इंसान की ज़िन्दगी में तक़िय्येह की ही एक किस्म है।

तक्रियह यानी छुपाना, उस मकाम पर जहाँ किसी चीज़ का ज़ाहिर करना खतरे व नुक़सान का सबब हो चाहे छुपाने से कोई फ़ायदा न भी हो। यह एक ऐसी अक़ली व शरई बात है जिस पर ज़रूरत के वक़्त सिर्फ़ शिया ही नहीं बल्कि तमाम दुनिया के मुसलमान व अक़लमन्द इंसान अमल करते हैं।

ताज्जुब की बात है कि कुछ लोग तक्रियेह के अक़ीदेह को शियों व मक़तबे अहलेबैत से मख़सूस करते हैं और उन पर एक ऐतेराज़ की शक़ल में इस को पेश करते हैं। जब कि यह एक रौशन मसला है जिसकी जड़ें कुरआने करीम , अहादीस व पैग़म्बरे इस्लाम की सीरत में मौजूद हैं। और पूरी दुनिया के अहले अक़ल हज़रात भी इस के कुबूल करते हैं।

67-तक्रियेह कहाँ पर हराम है

इस ग़लत फ़हमी की असली वजह शियों के अक़ीदेह के बारे में मुक़म्मल मालूमात का न होना है, हमारा ख़याल है कि ऊपर बयान की गई वज़ाहत से यह मसला कामिल तौर पर रौशन हो गया होगा।

लेकिन इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि कुछ जगहों पर तक़ियह हाराम है। और यह उस मक़ाम पर है जहाँ असासे दीनो व इस्लाम व कुरआन या निज़ामे इस्लामी ख़तरे में पड़ जाये। ऐसे मौक़ों पर इंसान को चाहिए कि अपने अक़ीदेह को ज़ाहिर करे चाहे इस अक़ीदेह को ज़ाहिर करने पर कितनी ही बड़ी कुरबानी क्यों न देनी पड़े। हमारा मानना है कि आशूर को कर्बला में हज़रत इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम का क़ियाम इसी हदफ़ के लिए था। क्यों कि बनी उमय्यह के बादशाहों ने इस्लाम की असास को ख़तरे में डाल दिया था। हज़रत इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम के क़ियाम ने उन के कामों पर से पर्दा हटा दिया और इस्लाम को ख़तरे से बचा लिया।

68- इस्लामी इबादात

जिन इबादतों की कुरआने करीम व सुन्नत ने ताकीद की है हम उन तमाम इबादतों के मोतक़िद व पाबन्द हैं। जैसे हर रोज़ की पंजगाना नमाज़ जो कि ख़ालिक व मख़लूक के दरमिन मुहिमतरीन राब्ता है, माहे रमज़ानुल मुबारक के रोज़े जो कि ईमान की तक़वियत, तज़क़िया-ए-नफ़स, तक़वे व हवा-ए-नफ़स से मुक़ाबला करने का बेहतरीन ज़रिया है।

हम अल्लाह के घर के हज पूरी उम्र में हर एक मर्तबा वाजिब मानते हैं इस शर्त के साथ कि इंसान हज के लिए मुस्तती हो(यानी खर्च रखता हो) हज मुसलमानों की इज़्जत,आपसी मुहब्बत और हुसूले तक़वा का बेहतरीन व मुअस्सरतरीन ज़रिया है।

इसी तरह हम माल की ज़कात व खुमुस, अम्र बिल मारूफ़ व नही अज़ मुनकर और इस्लाम व मुसलमानों पर हमला करने वालों से जिहाद करने को भी वाजिब मानते हैं।

इन तमाम कामों के जुज़यात में हमारे और इस्लाम के दिगर फ़िर्को के दरमियान कुछ फ़र्क पाये जाते हैं जैसे अहले सुन्नत के मज़ाहिबे चहार गाने के दरमियान भी इबादात के अहकाम बग़ैरह में कुछ फ़र्क पाये जाते हैं।

69- नमाज़ को जमा करना

हमारा अक़ीदह है कि नमाज़े जोह व अस्र, नमाज़े मगरिब व इशा को एक वक़्त में साथ मिला कर पढ़ने में कोई हरज नहीं है। (जब कि हमारा अक़ीदह है कि इन को जुदा जुदा पढ़ना अफ़ज़ल व बेहतर है) हमारा अक़ीदह है कि पैग़म्बरे इस्लाम

(स.) की तरफ़ से उन लोगों को जिन के लिए बार बार में ज़हमत होती है इन नमाज़ों को मिला कर पढ़ने की इजाज़त दी गई है।

सही तिरमिज़ी में इब्ने अब्बास से एक हदीस नक़ल हुई है और वह यह है कि “जमाआ रसूलु अल्लाहि (स.) बैना अज़ज़हरि व अलअस्रि, व बैना अलमगरिबि व अलइशाइ बिल मदीनति मिन गैरि खौफ़ि व ला मतरिन, क़ाला फ़कीला लिइब्नि अब्बास मा अरादा बिज़ालिक ? क़ाला अरादा अन ला युहरिजा उम्मतहु ”[17] यानी पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने मदीने में जोह व अस्र , मगरिब व इशा की नमाज़ों को मिला कर पढ़ा जबकि न कोई डर था औरक न ही बारिश, इब्ने अब्बास से सवाल किया गया कि पैग़म्बर का इस काम से क्या मक़सद था ? उन्होने जवाब दिया कि पैग़म्बर (स.) का मक़सद यह था कि अपनी उम्मत को ज़हमत में न डाले (यानी जब अलग अलग पढ़ना ज़हमत का सबब हो तो मिला कर पढ़ लिया करें।)

मख़सूसन हमारे ज़माने में जब कि इजतेमाई ज़िन्दगी बहुत पेचीदह हो गई है खास तौर पर कारखानो वगैरह में काम करने वाले लोगों के लिए, ऐसे मक़ामात पर नमाज़ को पाँच वक्तो में अलग अलग कर के पढ़ना दशवार है इ। कभी कभी नमाज़ों को जुदा कर के पढ़ना इस बात का सबब बना कि लोगों ने नमाज़ पढ़ना

ही छोड़ दिया। ऐसी हालत में पैगम्बरे इस्लाम (स.) की दी गई इजाज़त, यानी नमाज़ को मिला कर पढ़ना नमाज़ की पाबन्दी में मोस्सिर साबित हो सकती है। यह बात काबिले गौर है।

70- खाक पर सजदह करना

हमारा अक्रीदह है कि नमाज़ में या तो खाक पर सजदह किया जाये या फिर ज़मीन के अजज़ा में से किसी पर भी, या उन चीज़ों पर जो ज़मीन से पैदा होती हैं जैसे दरख्तों के पत्ते लकड़ी व घास फ़ूस बग़ैरह (उन चीज़ों को छोड़ कर जो खाने या पहनने में काम आती हैं)

इसी वजह से हम सूती फ़र्श पर सजदह करने को जायज़ नहीं मानते और खाक पर सजदह करने को दूसरी तमाम चीज़ों पर तरजीह देते हैं। आसानी के लिए अक्सर शिया पाक मिट्टी को गोल या चकोर शकल में ढाल लेते हैं और इसे अपने पास रखते हैं और नमाज़ पढ़ते वक़्त इसी पर सजदह करते हैं। यह गोल या चकोर शकल में ढाली गई मिट्टी सजदहगाह कहलाती है।

इस अमल की दलील के लिए हमारे पास पैगम्बरे इस्लाम (स.) की हदीस मौजूद है जिस में आपने फ़रमाया कि “जुइलत ली अलअर्जु मस्जिदन व तहूरन” [18] यानी मेरे लिए ज़मीन को मस्जिद व तहूर करार दिया गया।

हम इस हदीस में मस्जिद से सजदेह की जगह मुराद लेते हैं। यह हदीस अक्सर कुतुबे सहा में मौजूद है।

मुमकिन है कि यह कहा जाये कि इस हदीस में मस्जिद से मुराद सजदेह की जगह नहीं है बल्कि नमाज़ की जगह है। उस के मुकाबिल में जो नमाज़ को किसी मुऐय्यन जगह पर पढ़ता हो ,लेकिन इस बात पर तवज्जोह देने से कि यहाँ पर तहूर भी इस्तेमाल हुआ है तहूर यानी खाके तय्म्मुम, यह बात वाज़ेह हो जाती है कि यहाँ पर मस्जिद से मुराद सजदेह की जगह ही है न कि नमाज़ की जगह। यानी ज़मीन की खाक तहूर भी है और सजदेह की जगह भी। इसके अलावा आइम्मा-ए-मासूमीन अलैहिम अस्सलाम की बहुत सी ऐसी हदीसों हैं जो सजदेह के लिए खाक, संग और इन्हीं के मानिन्द दूसरी चीज़ों के बारे में राहनुमाई करती हैं।

71-पैगम्बरो व आइम्मा की क़ब्रों की ज़ियारत

हमारा अकीदह है कि पैगम्बरे इस्लाम (स.) व आइम्मा-ए-मासूमीन अलैहिम अस्सलाम, बुजुर्ग उलमा व अल्लाह की राह में शहीद होने वाले अफ़राद की क़ब्रों की ज़ियारत मुसतहब्बाते मुअक्किदा में से है।

अहले सुन्नत के उलमा की किताबों में पैगम्बरे इस्लाम (स.) की क़ब्रे मुबारक की ज़ियारत से मताल्लिक़ बहुतसी रिवायतें मौजूद हैं। इसी तरह शिया उलमा की किताबों में भी इस तरह की बहुत सी रिवायतें मौजूद है।[19] अगर इन तमाम रिवायतों को जमा किया जाये तो इस मौजू पर एक बड़ी किताब वुजूद में आ जायेगी।

दर तूले तारीख़ आलमे इस्लाम के बुजुर्ग उलमा और तमाम तबक़ात के लोगों ने इस काम को अहमियत दी है। और जो लोग पैगम्बरे इस्लाम(स.) व दिगर बुजुर्गों की कब्रों की ज़ियारत के लिए गये हैं उनकी ज़िन्दगी के हालात से किताबे भरी पड़ी हैं। कुल्ली तौर पर यह कहा जा सकता है कि यह मसला तमाम मुसलमानों का मोरिदे इत्तेफ़ाक़ मसला है।

यहाँ पर यह बात काबिले ग़ौर है कि ज़ियारत को इबादत नही समझना चाहिए। क्योंकि इबादत सिर्फ़ अल्लाह की ज़ात से मखसूस है। और ज़ियारत का मतलब

बुजुर्गाने इस्लाम का एहतेराम और अल्लाह की बारगाह में उन से शफ़ाअत तलब करना है। रिवायात में यहाँ तक आया है कि कभी कभी पैग़म्बरे इस्लाम(स.) खुद अहले कुबूर की ज़ियारत को जाते थे और जन्नतुल बक़ी में पहुँच कर उन को सलाम करते थे और उन पर दरूद पढ़ते थे।[20]

इस बिना पर कोई भी इस अमल को इस्लामी फ़िक़ह की नज़र से रद्द कर के ग़ैरे मशरूअ करार नहीं दे सकता।

72- अज़ादारी और इसका फ़लसफ़ा

हमारा अक़ीदह है कि शोहदा-ए- इस्लाम मख़सूसन शोहदा-ए-कर्बला के लिए अज़ादारी बरपा करना, इस्लाम की बक़ा के लिए उनकी जाफ़िशानी व उनकी याद को ज़िन्दा रखने का ज़रिया है। इसी वजह से हम हर साल खास तौर पर माहे मोहर्रम के पहले अशरे में (जो कि सरदार जवानाने जन्नत[21] फ़रज़न्दे अमीरुल मोमेनीन हज़रत अली व हज़रत ज़हरा के बेटे पैग़म्बरे इस्लाम(स.) के नवासे हुसैन इब्ने अली की शहादत से मख़सूस है) दुनिया के मुखतलिफ़ हिस्सों में अज़ादारी बरपा करते हैं। इस अज़ादारी में उनकी सीरत शहादत के मक़सद और मुसीबत को बयान करते हैं और उनकी रूहे पाक पर दरूद भेजते हैं।

हमारा मानना है कि बनी उमैय्यह ने एक खतरनाक हुकूमत कायम की थी और हुकूमत के बल बूते पर पैगम्बरे इस्लाम (स.) की बहुतसी सुन्नतों को बदल दिया था और आखिर में इस्लामी अक्रदार को मिटाने पर कसर बाँध ली थी।

यह सब देख कर हज़रत इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम ने सन् 61 हिजरी कमरी में यज़ीद के खिलाफ क्रियाम किया। यज़ीद एक गुनाहगार, अहमक और इस्लाम से बेगाना इंसान था और कुर्सीये खिलाफते इस्लामी पर काबिज़ था। इस क्रियाम के नतीजे में हज़रत इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम और उनकी साथियों को इराक में सरज़मीने कर्बला पर शहीद कर दिया गया और उनके बीवी बच्चों को असीर बना लिया गया। लेकिन उनका खून रंग लाया और उनकी शहादत ने उस ज़माने के तमाम मुसलमानों के अन्दर एक अजीबसा हीजान पैदा कर दिया। लोग बनी उमैय्यह के खिलाफ उठ खड़े हुए और मुखतलिफ़ मक़ामात पर क्रियाम होने लगे जिन्होंने ज़ालिम हुकूमत की नीव को हिला कर रख दिया और आखिर कार बनी उमैय्यह की हुकूमत का खातमा हो गया। अहम बात यह है कि इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम की शहादत के बाद बनी उमैय्यह के खिलाफ़ जितने भी क्रियाम हुए वह सब अरिज़ा लिआलि मुहम्मद या लिसारतिल हुसैन के तहत हुए। इन में से

बहुत से नारे तो बनी अब्बास की खुदसाख्ता हुकूमत के ज़माने तक लगते रहे।[22]

हज़रत इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम का यह खूनी क्रियाम आज हम शियों के लिए ज़ालिम हुकूमतों से लड़ने के लिए एक बेहरीन नमूना है। इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम के कर्बला में लगाये गये नारे “हैहात मिन्ना अज़िज़लत” यानी हम कभी भी ज़िल्लत को क़बूल नहीं करेंगे। “इन्ना अलहयाता अक्रीदतु व जिहाद” यानी ज़िन्दगी की हकीकत ईमान और जिहाद है। हमेशा हमारी रहनुमाई करते रहे हैं और इन्ही नारों का सहारा लेकर हम ने हमेशा ज़ालिम हुकूमतों का सामना किया है। सय्युश शोहदा हज़रत इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम और आप के बावफ़ा साथियों की इक़तदा करते हुए हमने ज़ालिमों के शर का खात्मा किया है। (ईरान के इस्लामी इंक़लाब में भी जगह जगह पर यही नारे सुन ने को मिले हैं।)

मुख्तस तौर पर यह कि शोहदा-ए- इस्लाम मखसूसन शोहदा-ए- कर्बला ने की याद ने हमारे अक्रीदेह व ईमान में क्रियाम, इसार, दिलेरी व शौक़े शहादत को हमेशा ज़िन्दा रखा है। इन शोहदा की याद हमको हमेशा यह दर्स देती है कि हमेशा सर बुलन्द रहो और कभी भी ज़ालिम की बैअत न करो। हर साल अज़ादारी बरपा करने और शहीदों की याद को ज़िन्दा रखने की फ़लसफ़ा यही है।

मुमकिन है कि कुछ लोग इस अज़ादारी के फ़ायदे से आगाह ना हो। शायद वह कर्बला और इस शहादत को एक पुराना तारीखी वाक़िया समझते हो, लेकिन हम अच्छी तरह जानते हैं कि इस याद को बाक़ी रखने की हमारी कल की, आज की और आइन्दा की तारीख में क्या तसीर रही है और रहेगी।

जंगे ओहद के बाद सैय्यदुश शोहदा जनाबे हमज़ा की शहादत पर पैग़म्बरे इस्लाम का अज़ादारी बरपा करना बहुत मशहूर है। तारीख की सभी मशहूर किताबों में नक्ल हुआ है कि पैग़म्बरे इस्लाम(स.) एक अनसारी के मकान के पास से गुज़रे तो उस मकान से रोने और नोहे की आवाज़ सुनाई दी पैग़माबरे इस्लाम(स.) की आखों से भी अशक जारी हो गये और आपने फ़रमाया कि आह हमज़ा पर रोने वाला कोई नहीं है। यह बात सुन कर सअद बिन मआज़ तायफ़ा-ए-बनी अब्दुल अशहल के पास गया और उनकी ख़वातीन से कहा कि पैग़म्बर के चचा हमज़ा के घर जाओ और उनकी अज़ादारी बरपा करो।[23]

यह बात ज़ाहिर है कि यह काम जनाबे हमज़ा से मख़सूस नहीं था। बल्कि यह एक ऐसी रस्म है जो तमाम शहीदों के लिए अंजाम दी जाये और उनकी याद को आने वाली नस्लों के लिए ज़िन्दा रखा जाये और जिस से हम मुसलमानों की रगो

में खून को गरम रख सकें। इत्तेफाक से आज जो मैं यह सतरे लिख रहा हूँ आशूर का दिन है (10 मुहर्रम सन् 1417 हिजरी कमरी) और आलममें तश्शयो में एक अज़ीम वलवला है, बच्चे ,जवान बूढ़े सभी सियाह लिबास पहने हुए इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम की अज़ादारी में शिरकत कर रहे हैं। आज इन में ऐसा जोश व जज़बा भरा हुआ है कि अगर इस वक़्त इन से दुशमने इस्लाम से दंग करने के लिए कहा जाये तो सभी हाथों में हथियार ले कर मैदाने जंग में वारिद हो जायेंगे। इस वक़्त इनमें वह जज़बा कार फ़रमा है कि यह किसी भी किस्म की कुर्बानी व इसार से दरेग नही करेंगे। इनकी हालत ऐसी है कि गोया इन सब की रगो में खूने शहादत जोश मार रहा है और यह इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम व उनके साथियों को मैदाने कर्बला में राहे इस्लाम में लड़ते हुए देख रहे हैं।

इस अज़ादारी में इस्तेमार व इस्तकबार को मिटा डालने, जुल्म व सितम के सामने न झुकने व इज़ज़त की मौत को ज़िल्लत की ज़िन्दगी पर तरजीह देने से मुताल्लिक शेर पढ़े जाते हैं।

हमारा मानना है कि यह एक अज़ीम मानवी सरमाया है जिसकी हिफ़ाज़त बहुत ज़रूरी है। क्यों कि इस से इस्लाम, ईमान व तक़वे की बका के लिए मदद मिलती है।

73-अक़दे मुवक़क़त (मुताअ)

हमारा अक़ीदह है कि अक़दे मुवक़क़त एक शरई अमल है जो इस्लामी फ़िक्ह में मुताअ के नाम से मशहूर है। इस तरह अक़दे इज़दवाज (शादी व्याह) की दो किस्में हैं।

एक इज़दवाजे दाइम जिसका वक़्त व ज़मान महदूद नहीं है।

दूसरे इज़दवाजे मुवक़क़त इसकी मुद्दत शोहर बीवी की मुवाफ़ेक़त से तै होती है।

अक़दे मुवक़क़त बहुत से मसाइल में अक़दे दाइम के मशाबेह है। जैसे मेहर, औरत का शादी में माने हर चीज़ से ख़ाली होना, अक़दे मुवक़क़त के ज़रिये पैदा होने वाली औलाद और अक़दे दाइम से पैदा होने वाली औलाद के अहक़ाम के दरमियान कोई फ़र्क़ नहीं पाया जाता, अक़द की मुद्दत तमाम होने के बाद इद्दत ज़रूरी है। यह सब चीज़े हमारे यहाँ अक़दे मुवक़क़त के मुसल्लेमात जुज़ हैं। दूसरे अलफ़ाज़ में मुताअ शादी की एक किस्म है शादी की तमाम ख़ुसूसियात के साथ।

बस मुताअ व अक़दे दाइम में यह फ़र्क़ पाया जाता है कि मुताअ में औरत का खर्च मर्द पर वाजिब नहीं है और शोहर व बीवी एक दूसरे से इर्स नहीं पाते। लेकिन अगर उन के औलाद हो तो वह माँ बाप दोनों से विर्सा पाते हैं।

हम ने इस हुक्म को कुरआने करीम से हासिल किया है “फ़मा इस्तमतअतुम बिहि मिन हुन्ना फ़आतू हुन्ना उजूरा हुन्ना फ़रिज़तन ”[24] यानी तुम जिस औरत से मताअ करो उसका मेहर अदा करो।

बहुत से मशहूर मुहद्दिसों व मुफ़स्सिरों ने इस बात की तसरीह की है कि यह आयत मुताअ के बारे में है।

तफ़सीरे तबरी में इस आयत के तहत बहुत सी ऐसी रिवायतें नक़ल हुई हैं जो इस बात की निशानदेही करती हैं कि यह आयत मुताअ के बारे में है और इस के बारे में पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के असहाब के एक बहुत बड़े गिरोह ने गवाहियाँ भी दी हैं।

तफ़सीरे दुर्रे मनसूर व सुनने बहीकी में भी इस बारे में बहुत सी रिवायतें बयान हुई हैं। सही बुखारी, सही मुसलिम, मुसनदे अहमद और दूसरी बहुत सी किताबों में ऐसी रिवायतें मौजूद हैं जो पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के ज़माने में मुताअ के रिवाज को साबित करती हैं। अहले सुन्नत के कुछ फ़कीहों का यह अक़ीदह है कि अक़दे मुताअ पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के ज़माने में राइज था यह हुक्म बाद में नस्ख हो गया। लेकिन अहले सुन्नत के ही कुछ फ़कीह यह कहते हैं कि यह हुक्म पैग़म्बरे

इस्लाम (स.) की ज़िन्दगी तक जारी रहा मगर बाद में इसको हज़रत उमर ने नस्ख कर दिया। इस बारे में हज़रत उमर की हदीस का मौजूद होना इस बात की गवाही के लिए काफ़ी है। उन्होंने फ़रमाया कि मुतअतानि कानता अला अहदि रसूलि अल्लाहि व अना मुहर्रिमुहुमा व मुआक्बिब अलैहिमा मुतअतुन निसा व मुतअतुल हज्ज।[25] यानी पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के ज़माने में जो दो मुतआ राइज थे मैंने उनको हराम कर दिया है और इन को अंजाम देने वाले अफ़राद को सज़ा दूँगा, एक मुता-ए-निसा और दूसरा मुता-ए-हज।

इस बात में कोई शक नहीं है कि अहले सुन्नत के दरमियान इस इस्लामी हुकम के बारे में दूसरे बहुत से अहकाम की तरह इख़्तेलाफ़े नज़र पाया जाता है। कुछ लोग पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के ज़माने में इस के नस्ख के काइल हैं और कुछ इस के नस्ख को खलीफ़ा-ए-सानी के दौर में मानते हैं। और एक छोटा सा गिरोह इसका कुल्ली तौर पर इंकार करता है। अहले सुन्नत में इस तरह के फ़िक्ही मसाइल में इख़्तलाफ़ पाया जाता है। लेकिन शिया उलमा मुतआ के शरई होने में मुत्तफ़िक्क हैं और कहते हैं कि यह पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के ज़माने में नस्ख नहीं हुआ है और पैग़म्बर (स.) के बाद इसका नस्ख होना ग़ैर मुमकिन है।

बहर हाल हमारा मानना है कि अगर मुताअ से ग़लत फ़ायदा न उठाया जाये तो यह समाज की अहम ज़रूरत है और उन जवानों के लिए फ़यदे मन्द है जो दाइमी निकाह करने पर क़ादिर नहीं हैं। या वह अफ़राद जो तिजारत, नौकरी या किसी दूसरी बिना पर एक लम्बे वक़्त तक अपने घर से दूर रहते हैं और जिस्मानी ज़रूरत को पूरा करने के लिए उनको तवाइफ़ों के दरवाज़ों को खटखटाना पड़ता है। खास तौर पर हमारे ज़माने में मुताअ बहुत मुफ़ीद है क्योंकि आज कल इंसान के सामने बहुतसी मुश्किलें हैं जिनकी वजह से शादीयाँ काफ़ी सिन गुज़र जाने के बाद हो रही हैं। दूसरी तरफ़ शहवत बढ़ाने वाले आमिल बहुत तेज़ी से फैल रहे हैं। अगर इन हालात में मुताअ का दरवाज़ा बंद हो गया तो तवाइफ़ों के दरवाज़े यकीनी तौर पर आबाद हो जायेंगे।

हम इस बात की एक बार और तकरार करते हैं कि हम इस हुक्म शरई की आइ में हर क़िस्म का ग़लत फ़यदा उठाने, इस पाकीज़ा हुक्म को हवस परस्त अफ़राद के हाथों का खिलौना बनाने, औरतों को दलदल में फँसाने के सख्त मुखालिफ़ हैं। लेकिन कुछ हवस परस्त लोगों के ग़लत फ़ायदा उठाने की वजह से अस्ल हुक्म से मना नहीं करना चाहिए बल्कि लोगों को ग़लत फ़यदा उठाने से रोकना चाहिए।

74- शियत की तारीख

हमारा मानना है कि शियत की इबतदा पैगम्बरे इस्लाम (स.) के ज़माने में आपके अक़वाल से हुई। हमारे पास इस क़ौल की बहुत सी सन्दें मौजूद हैं।

उन में से एक यह है कि सूरे बय्यिनह की आयत “इन्न अल्लज़ीना आमनू व अमिलु अस्सालिहाति उलाइका हुम ख़ैरु अलबरिय्यह ”[26] यानी जो लोग ईमान लाये और नेक अमल अंजाम दिये वह (अल्लाह की) बेहतरीन मखलूक हैं। के तहत बहुत से मुफ़स्सेरीन ने लिखा है कि पैगम्बर (स.) ने फ़रमाया कि इस आयत से मुराद अली (अ.) व उन के शिया हैं।

पैगम्बरे इस्लाम (स.) की इस हदीस को जलालुद्दीन सियोति ने अपनी तफ़सीर “अद्दुरु अलमनसूर” ने इब्ने असाकर व जाबिर बिन अब्दुल्लाह के हवाले से नक़ल किया है कि हम पैगम्बरे इस्लाम (स.) की ख़िदमत में थे कि हज़रत अली (अ.) हमारे पास आये जैसे ही पैगम्बरे इस्लाम (स.) की नज़र उनके चेहरे पर पड़ी फ़रमाया “व अल्लज़ी नफ़सी बियदिहि इन्ना हाज़ा व शीअतहु लहुम अलफ़ाइज़ूना यौमा अलक्रियामति।” यानी उसकी क़सम जिसके कब्ज़ा-ए-कुदरत में मेरी जान है यह और इनके शिया रोज़े क्रियामत कामयाब होने वाले हैं। इसके बाद यह आयत

नाज़िल हुई “इन्न अल्लज़ीना आमनू व अमिलु अस्सालिहाति उलाइका हुम खैरु अलबरिय्यह” इस वाकिये के बाद से हज़रत अली अलैहिस्सलाम जब भी असहाब के मजमे में दाखिल होते थे तो असहाब कहते थे “जाआ खैरु अलबरिय्यह” यानी अल्लाह की सबसे बेहतर मखलूक आ गई।[27]

इस मतलब को थोड़े से फ़र्क के साथ इब्ने अब्बास, अबू बरज़ह, इब्ने मर्दवियह, अतिय्य-ए- औफ़ी ने भी नक़ल किया है।[28]

इस से मालूम होता है कि हज़रत अली अलैहिस्सलाम से वाबस्ता अफ़राद के लिए पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के ज़माने में ही लफ़्ज़े “शिया” का इस्तेमाल किया जाता था और यह नाम उनको पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने दिया था। उनका यह नाम खुलफ़ा या हुकूमते सफ़वियह के ज़माने में नहीं पड़ा।

इस के बावजूद कि हम इस्लाम के तमाम फ़िक्रों का एहतेराम करते हैं, उनके साथ एक सफ़ में खड़े हो कर नमाज़ पढ़ते हैं, सब के साथ मिल कर हज करते हैं और इस्लाम के तमाम मुशतरक अहदाफ़ में उनका साथ देते हैं। लेकिन हमारा मानना है कि मक़तबे अली अलैहिस्सलाम की कुछ खुसूसियतें हैं और इस मक़तब

पर पैगम्बरे इस्लाम (स.) की खास नज़रे करम रही है इसी लिए हम इस मकतब की पैरवी करते हैं।

कुछ शिया मुखालिफ़ गिरोह शियत को अब्दुल्लाह इब्ने सबा से मंसूब करने की कोशिश करते हैं हमेशा यह दोहराते रहते हैं कि शिया अब्दुल्लाह इब्ने सबा नामी एक शख्स के पैरोकार हैं जो अस्ल में एक यहूदी था और बाद में इस्लाम क़बूल कर के मुसलमान बन गया था। यह बहुत अजीब बात है, क्यों कि शियों की तमाम किताबों को देखने से पता चलता है कि शियत का इस इस मर्द से कभी भी कोई दूर का वास्ता भी नहीं रहा है। बल्कि इसके बर ख़िलाफ़ शियों की इल्मे रिजाल की तमाम किताबों में अब्दुल्लाह इब्ने सबा के बारे में यह मिलता है कि वह एक गुमराह आदमी था। हमारी कुछ रिवायतों के मुताबिक़ हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने, मुरतद होने के जुर्म में उसके क़त्ल का फ़रमान जारी किया।[29]

इस के अलावा यह कि अब्दुल्लाह इब्ने सबा का अस्ल वुजूद ही मशकूक है। क्यों कि कुछ मुहक्किको का मानना है कि अब्दुल्लाह इब्ने सबा एक अफ़सानवी इंसान है। उसका का वुजूदे खारजी ही नहीं पाया जाता था चेजाय कि वह शिया मज़हब का बुनयान गुज़ार हो।[30] अगर उसको एक अफ़सानवी इंसान न भी माना जाये तो हमारी नज़र में वह एक गुमराह इंसान था।

75- शिया मज़हब का जोगराफ़िया

मौजूदह ज़माने में शियों का सबसे बड़ा मरकज़ ईरान है लेकिन यह बात काबिले तवज्जोह है कि ईरान हमेशा ही शियत का मरकज़ नहीं रहा है। बल्कि पहली सदी हिजरी में ही कूफ़ा, यमन, मदीना शियत के मरकज़ रहे हैं। यहाँ तक कि बनी उमैयह की जहर आलूद तबलीगात के बावजूद शाम भी शियों का मरकज़ रहा है। लेकिन इन सब के बावजूद शियों का सबसे बड़ा मरकज़ इराक़ ही रहा है।

इसी तरह सर ज़मीने मिस्र पर भी शिया हमेशा ज़िन्दगी बसर करते रहे हैं। खुलफ़ा-ए- फ़तमी के दौर में तो मिस्र की हुकूमत ही शियों के हाथ में थी।[31]

आज भी दुनिया के बहुत से मुल्कों में शिया पाये जाते हैं और सऊदी अरब के मनतका-ए- शरक्रियह में शिया एक बड़ी तादाद में रहते हैं और इस्लाम के दूसरे फ़िक्रों के लोगों के साथ उन के अच्छे ताल्लुकात हैं। इस्लाम के दुशमनों की हमेशा यह कोशिश रही है कि शिया और सुन्नी मुसलमानों के बीच दुशमनी व इख़्तेलाफ़ के बीज बो कर इन को आपस में लड़ाए और इस तरह दोनों को ही कमज़ोर कर दे।

खासतौर पर आज के ज़माने में जबकि इस्लाम शर्क व गर्ब की माद्री दुनिया के सामने एक अज़ीम ताक़त बन कर उभरा है और माद्री तहज़ीब से थके हारे उदास लोगों को अपनी तरफ़ मुतवज्जेह कर रहा है। आज इस्लाम दुशमन अफ़राद मुसलमानों की ताक़त को तोड़ने और इस्लाम की तरक्की की रफ़्तार को सुस्त करने के लिए इस कोशिश में लगे हुए हैं कि मुसलमानों के दरमियान इख़्तेलाफ़ पैदा कर के इन को आपसी झगड़ो में उलझा दिया जाये। अगर इस्लाम के तमाम फ़िर्का के लोग इस बात को समझ लें और होशियार हो जायें तो दुशमन के इस मंसूबे को ख़ाक में मिलाया जा सकता है।

यह बात भी काबिले ज़िक्र है कि शियों में भी अहले सुन्नत की तरह मुताद्विद फ़िर्के पाये जाते हैं इन में सब से मशहूर और बड़ा फ़िर्का शिया असना अशरी है जिसके पैरोकार तमाम दुनिया में कसीर तादाद में मौजूद हैं। अगरचे शियों की दक्कीक़ तादाद और दुनिया के दूसरे मुसलमानों की निसबत इन की तदाद सही तौर पर मालूम नहीं है, मगर कुछ आकँड़ो की बुनियाद पर इस वक़्त दुनिया में तक्करीबन तीन सौ मिलयून शिया पाये जाते हैं जो आज की मुसलिम आबादी का ¼ है।

76- अहले बैत (अ.) की मीरास

मकतबे शियत के पास पैगम्बरे इस्लाम (स.) की हदीसों का एक बहुत बड़ा खज़ाना मौजूद है जो इस मकतब को आइम्मा-ए- मासूमीन अलैहिम अस्सालाम के ज़रिये हासिल हुआ है। इस के अलावा हज़रत अली अलैहिस्सलाम व दिगर आइम्मा के अक़वाल भी फ़रवान मौजूद हैं जो इस वक़्त शिया फ़िक्ह व मआरिफ़ के असली मनाबे शुमार होते हैं। शिया मकतब में अहादीस की चार किताबे मोतबर समझी जाती हैं जो कुतुबे अरबा के नाम से मशहूर हैं जिन के नाम इस तरह हैं-

- (1) काफ़ी
- (2) मन ला यहज़ुरुहु अलफ़कीह
- (3) तहज़ीब
- (4) इस्तबसार

लेकिन यहाँ पर इस बात का ज़िक्र ज़रूरी है कि कोई यह न समझे कि हमारी इन चारों किताबों या दूसरी मोतबर किताबों में जो हदीसों मौजूद हैं, वह सब मोतबर हैं। नहीं ऐसा नहीं है, बल्कि हर हदीस का एक सनदी सिलसिला है रिजाल की किताबों की मदद से सनद में मौजूद हर इंसान के बारे में छानबीन होती है जिस रिवायत के तमाम रावी मोरिदे यकीन होते हैं उस हदीस के हम सही मानते हैं और जिस रिवायत के तमाम रावी मोरिदे इतमिनान नहीं होते हम उस हदीस

को ज़ईफ़ व मशकूक मानते हैं। रिजाल की छानबीन का यह काम सिर्फ़ उलमा-ए-इल्मे रिजाल व हदीस से मखसूस है।

यहाँ से यह बात अच्छी तरह रौशन हो जाती है कि शियों की हदीस की किताबें अहले सुन्नत की हदीस की किताबों लसे मुताफ़ावित है। क्योंकि अहले सुन्नत की कुतुबे सहा मखसूसन सही बुखारी व सही मुस्लिम के मोल्लिफ़ों का दावा यह है कि हम ने जो इन किताबों में हदीसे जमा की हैं हमारे नज़दीक वह सब सही व मोतबर हैं। इसी बिना पर इन हदीसों में से किसी के ज़रिये भी अहले सुन्नत के अक्रीदेह को समझा जा सकता है। इस के बर खिलाफ़ शिया मुहद्देसीन ने इस बात पर बिना रखी कि अहले बैत अलैहिम अस्सलाम से मंसूब जो भी हदीसों मिलें उनको जमा कर लिया जाये और इनके सही या ग़लत होने की शनाख़्त का काम उलमा-ए-रिजाल के हवाले कर दिया जाये।

77- दो अहम किताबें

वह अहम मनाबे जो शियों की बहुत अहम मीरास समझे जाते हैं उनमें से एक नहजुल बलागा है। यह किताब हज़रत अली अलैहिस्सलाम के ख़ुतबों, ख़तों और कलमाते किसार पर आधारित है। इस किताब को अब से एक हज़ार साल पहले मरहूम सैयद रज़ी रिजवानुल्लाह तआला अलैह ने मुरत्तब किया था। इस किताब

के मतालिब, अलफ़ाज़ की ज़ेबाई और कलाम की शीरनी ऐसी है कि जो भी इस किताब को पढ़ता है इस का गिरवीदह हो जाता है, चाहे वह किसी भी मज़हब से ताल्लुक रखता हो। काश सिर्फ़ मुसलमान ही नहीं बल्कि अगर ग़ैरे मुसलमान भी इस किताब को पढ़ें तो इस्लाम के तौहीद व मआद के नज़रियह से आगाह हो कर इस्लाम के सियासी अखलाकी व समाजी मसाइल से आशना हो जायें।

इस सिलसिला-ए-मीरास की दूसरी अहम किताब सहीफ़ा-ए-सज्जादियह है। यह किताब दुआओं का मज़मूआ है। इन दुआओं में इस्लाम के बुलन्द मर्तबा बेहतरीन मआरिफ़, फ़सीह व जेबा इबारतों में बयान किये गये हैं। इस किताब में मौजूद दुआएँ नहजुल बलागा के ख़ुत्बों की तरह हैं। जिनका हर जुम्ला इंसान को एक नया दर्स देता है और अल्लाह की इबादत व अल्लाह से दुआ का तरीक़ा सिखाते हुए इंसान की रूह को जिला बख़्शता है।

जैसा कि इस किताब के नाम से ज़ाहिर है यह किताब शिया मक़तब के चौथे इमाम हज़रत ज़ैनुल आबीदीन अलैहिस्सलाम (जो कि सैयदे सज्जाद के लक़ब से मशहूर हैं) की दुआओं का मज़मूआ है। हम जिस वक़्त भी यह चाहते हैं कि अल्लाह की बारगाह में दुआ करें, उसकी इबादत में इज़ाफ़ा करें, उस ज़ाते पाक से अपने राबते को और मज़बूत बनाएँ तो हम इन्हीं दुआओं को पढ़ते हैं। इन दुआओं

को पढ़ने से हमारी रूह इसी तरह शाद होती है जिस तरह बारिश के पानी से सेराब हो कर सबज़ा लहलहाने लगता है।

शिया मक़तब से मुताल्लिक़ दस हज़ार से जाइद हदीसों में से अक्सर हदीसों पाँचवें और छठे इमाम यानी हज़रत इमाम मुहम्मद बाकिर अलैहिस्सलाम व हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़ आलैहिस्सलाम से नक़ल हुई हैं। इन आहादीस का एक अहम हिस्सा हज़रत इमाम रिज़ा अलैहिस्सलाम से भी नक़ल हुआ है। इस की वजह यह है कि इन तीनों बुज़ुर्गों ने ऐसे ज़माने में ज़िन्दगी बसर की जब अहले बैत अलैहिम अस्सलाम पर दुशमनों और बनी उमैयह व बनी अब्बास के हाकिमों का दबाव कम था। लिहाज़ा इस फ़ुर्सत का फ़ायदा उठाते हुए पैग़म्बरे इस्लाम (स.) की वह अहादीस जो मआरिफ़ के तमाम अबवाब व इस्लामी फ़िक़ह के अहकाम से मुताल्लिक़ थी, और इन के आबा व अजदाद के ज़रिये इन तक पहुँची थी अवाम के सामने बयान करने में कामयाब हो गये। शिया मज़हब को जाफ़री मज़हब जो कहा जाता है इस की वजह यही है कि शिया मज़हब की अक्सर रिवायतें इमाम जाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम से नक़ल हुई हैं। इमाम सादिक़ अलैहिस्सलाम का ज़माना वह था जब बनी उमैयह रू बज़वाल थे और बनी अब्बास अभी सही से अपने पंजे नहीं जमा पाये थे। हमारी किताबों में मिलता है कि इसी दौरान इमाम

सादिक अलैहिस्सलाम ने मआरिफे फ़िक्ह व अहादीस में चार हज़ार शागिर्दों की तरबीयत की।

हनफ़ी मसलक के इमाम अबू हनीफ़ा हज़रत इमाम जाफ़र सादिक अलैहिस्सलाम की तारीफ़ करते हुए इस तरह कहते हैं कि “मा रऐतु अफ़क़हा मिन दाफ़र बिन मुहम्मद ”[32] यानी मैंने जाफ़र इब्ने मुहम्मद से बड़ा कोई फ़कीह नहीं देखा।

मालिकी मज़हब के इमाम मालिक िब्ने अनस कहते हैं कि “एक मुद्दत तक मेरा जाफ़र बिन मुहम्मद के पास आना जाना रहा मैं जब भी उनके पास जाता था, उनको तीन हालतों में से एक में पाता था या तो वह नमाज़ में मशगूल होते थे या रोज़े से होते थे या तिलावते कुरआने करीम कर रहे होते थे। मेरा अक़ीदह है कि इल्म व इबादत के लिहाज़ से जाफ़र इब्ने मुहम्मद से बाफ़ज़ीलत मर्द न किसी ने देखा है और न ही ऐसे आदमी के बारे में किसी ने सुना है। ”[33]चूँकि यह किताब बहुत मुख्तसर है इस लिए आइम्मा-ए- मासूमीन अलैहिस्सलाम के बारे में उलमा-ए-इस्लाम के तमाम नज़रियात को नक़ल नहीं कर रहे हैं।

78- इस्लामी उलूम में शियों का किरदार

उलूमें इस्लामी की दाग बाल में शियों का बहुत अहम किरदार रहा है। कुछ लोगों का मानना है कि उलूमे इस्लामी शियों के ज़रिये ही फूला फला है। इस बारे में बहुत सी किताबें भी लिखी जा चुकी हैं और इन में इस दावे के सबूत भी पेश किये जा चुके हैं। लेकिन हमारा कहना है कि कम से कम इन उलूम की बुनियाद व पेशरफ्त में शियों का बहुत बड़ा हाथ रहा है और इसकी बेहतरीन दलील इस्लामी इल्म व फ़नून में शिया उलमा की लिखी हुई किताबें हैं। शिया उलमा ने फ़िक्रह व उसूल में हज़ारों किताबें लिखी हैं जिनमें से बहुत सी किताबें बहुत बड़ी व बेनज़ीर हैं। इसी तरह शिया उलमा ने उलूमे कुरआन, तफ़सीर, अक़ाइद व इल्मे कलाम में हज़ारों किताबें लिखी हैं। इन में से बहुत सी किताबें आज भी हमारे किताब खानों के अलावा दुनिया के बड़े बड़े व मशहूर किताब खानों में मौजूद हैं। जिस का दिल चाहे वह इन किताब खानों में जाकर इन किताबों को देखे और इस क़ौल की सदाक़त को जाने।

इमामत

पैग़म्बरे इस्लाम (स.) की शहादत के बाद इस्लामी समाज में पैग़म्बर (स.) के जानशीन (उत्तराधिकारी) और खिलाफ़त का मसला सब से ज़्यादा महत्वपूर्ण था। एक ग़िरोह ने पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के कुछ असहाब के कहने पर हज़रत अबू

बकर को पैग़म्बर (स.) का खलीफ़ा (उत्तराधिकारी) चुन लिया, लेकिन दूसरा गिरोह पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के हुक्म के अनुसार हज़रत अली (अ. स.) की खिलाफ़त के ईमान पर अटल रहा। एक लम्बा समय बीतने के बाद पहला गिरोह अहले सुन्नत व अल- जमाअत के नाम से और दूसरा गिरोह शिया के नाम से मशहूर हुआ।

यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि शिया व सुन्नी के बीच जो अन्तर पाया जाता है वह सिर्फ़ पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के जानशीन के आधार पर नहीं है, बल्कि इमाम के मअना व मफ़हूम के बारे में भी दोनों मज़हबो (सम्प्रदायों) के दृष्टिकोणों में बहुत ज़्यादा फर्क पाया जाता है। अतः इसी आधार पर दोनों मज़हब एक दूसरे से अलग हो गये हैं।

हम यहाँ पर इस बात की वज़ाहत (व्याख्या) के लिए (इमाम और इमामत) के मअना की तहकीक़ करते हैं ताकि दोनों के नज़रिये स्पष्ट हो जायें।

शाब्दिक आधार पर इमामत का अर्थ व मअना नेतृत्व व रहबरी हैं और एक निश्चित मार्ग में किसी गिरोह की सर परस्ती करने वाले ज़िम्मेदार को इमाम कहा जाता है। मगर दीन की इस्तलाह (धार्मिक व्याख्यानो व लेखों में प्रयोग होने वाले

विशेष शब्दों को इस्तलाह कहा जाता है) में इमामत के विभिन्न अर्थ व मअना उल्लेख हुए हैं।

सुन्नी मुसलमानों के नज़रिये के अनुसार इमामत दुनिया की बादशाही का नाम है और इस के द्वारा इस्लामी समाज का नेतृत्व किया जाता है। अतः जिस तरह हर समाज को एक रहबर व उच्च नेतृत्व की ज़रूरत होती है और उसमें रहने वाले लोग अपने लिए एक रहबर को चुनते हैं, इसी तरह इस्लामी समाज के लिए भी ज़रूरी है कि वह पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के बाद अपने लिए एक रहबर का चुनाव करे, और चूँकि इस्लाम धर्म में इस चुनाव के लिए कोई खास तरीका निश्चित नहीं किया गया है इस लिए पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के जानशीन (उत्तराधिकारी) के चुनाव के लिए विभिन्न तरीकों को अपनाया जा सकता है। जैसे- जिसे पब्लिक या बुजुर्गों का अधिक समर्थन मिल जाये या जिसके लिए पहला जानशीन वसीयत करदे या जो बगावत कर के या फौजी ताक़त का प्रयोग कर के हुकूमत पर कब्ज़ा कर ले।

लेकिन शिया मुसलमानों का मत है कि हज़रत मुहम्मद (स.) अल्लाह के आखिरी पैग़म्बर थे और उनके बाद पैग़म्बरी ख़त्म हो गई। उनके बाद पैग़म्बरी की जगह इमामत ने लेली अर्थात अल्लाह ने इंसानों की हिदायत के लिए पैग़म्बर

के स्थान पर इमाम भेजने शुरू कर दिये। इमाम मखलूक के बीच अल्लाह की हुज्जत और उसके फ़ैज़ का वास्ता होता है। अतः शिया इस बात पर यकीन व ईमान रखते हैं कि इमाम को सिर्फ अल्लाह निश्चित व नियुक्त करता है और उसे पैग़म्बर, वही का पैग़ाम लाने वाले के द्वारा पहचनवाता है। यह नज़रिया इमामत की अज़मत और बलन्दी (महानता) के साथ शिया फ़िक्र में पाया जाता है। इस नज़रिये के अनुसार इमाम का कार्य क्षेत्र बहुत व्यापक है वह इस्लामी समाज का सरपरस्त होता है और अल्लाह के अहकाम को बयान करता है, कुरआन का मुफ़स्सिर होता है और इंसानों को राहे सआदत (कल्याण व निजात) की हिदायत करता है। बल्कि इससे भी अधिक स्पष्ट शब्दों में यह कहा जा सकता है कि शिया संस्कृति में “इमाम ” पब्लिक की दीन और दुनिया की मुश्किलों को हल करने वाले व्यक्तित्व का नाम है। इसके विपरीत अहले सुन्नत का मानना यह है कि खलीफ़ा या इमाम की ज़िम्मेदारी सिर्फ दुनिया से संबंधित कामों में हुकूमत करना है।

इमाम की ज़रूरत

इन नज़रीयों के उल्लेख के बाद अब इस सवाल का जवाब देना उचित है कि कुरआने करीम और सुन्नते पैग़म्बर (स.) के बावजूद इमाम की क्या ज़रूरत है ?

इमाम की ज़रूरत के लिए बहुत से दलीलें पेश की गई हैं लेकिन हम यहाँ पर उन में से सिर्फ़ एक को अपने सादे शब्दों में पेश कर रहे हैं।

जिस दलील के द्वारा नबियों (अ. स.) की ज़रूरत साबित होती है, वही दलील इमाम की ज़रूरत को भी साबित करती है। एक बात तो यह कि क्यों कि इस्लाम आखरी दीन है और हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (स.) अल्लाह की तरफ़ से आने वाले आखरी पैग़म्बर हैं, अतः ज़रूरी है कि इस्लाम में इतनी व्यापकता हो कि वह क्रियामत तक की इंसानों की सारी ज़रूरतों को पूरा कर सके। दूसरी बात यह कि कुरआने करीम में इस्लाम के उसूल (आधारभूत सिद्धान्त), अहकाम (आदेश) और इलाही तालीमों (शिक्षाओं) को आम व आंशिक रूप में उल्लेख किया गया है और उनकी तफ़्सीर व व्याख्या पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के ज़िम्मे है।[1] यह बात स्पष्ट है कि पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने मुसलमानों के हादी और रहबर के रूप में ज़माने की ज़रूरतों के अनुसार और अपने ज़माने के इस्लामी समाज की योग्यता के अनुरूप अल्लाह की आयतों को बयान किया अतः पैग़म्बर इस्लाम (स.) के लिए आवश्यक है कि अपने बाद वाले ज़माने के लिए कुछ ऐसे लायक जानशीनों को छोड़ें जो खुदा वन्दे आलम के ला महदूद (अपार व असीमित) इल्म के दरिया से संबंधित हो ताकि जिन चीज़ों को पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने बयान नहीं किया, वह उनको बयान करें और हर ज़माने में इस्लामी समाज की ज़रूरतों को पूरा करते रहें ।

इसी लिए इमाम (अ. स.) पैग़म्बरे इस्लाम (स.) की छोड़ी हुई मिरास के मुहाफिज़ (रक्षा करने वाले), कुरआने करीम के सच्चे मुफ़स्सिर और उस के सही मअना बयान करने वाले हैं, ताकि अल्लाह का दीन स्वार्थी दुशमनों के द्वारा तहरीफ (परिवर्तन) का शिकार न हो और यह पाक व पाकीज़ा दीन क्रियामत तक बाकी रहे।

इसके अलावा, इमाम इंसाने कामिल (पूर्ण रूप से विकसित इन्सान) के रूप में इन्सानियत के तमाम पहलुओं में नमूनए अमल (आदर्श) है। क्यों कि इन्सानियत को एक ऐसे नमूने की सख्त ज़रूरत है जिसकी मदद और हिदायत के द्वारा इंसानी सामर्थ्य के अनुसार तरबियत (प्रशिक्षण) पा सके और इन आसमानी प्रशिक्षकों के आधीन रह कर भटकाव व अपने नफ़्स की इच्छाओं के जाल और बाहरी शैतानों से सुरक्षित रह सके।

उपरोक्त विवरण से ये बात स्पष्ट हो जाती है कि जनता को इमाम की बहुत ज़रूरत है और इमाम की ज़िम्मेदारियाँ निम्न लिखित हैं।

o समाज का नेतृत्व व समाजी मुश्किलों का समाधान करना अर्थात हुक्मत की स्थापना।

o पैगम्बरे इस्लाम के दीन को तहरीफ़ (परिवर्तन) से बचाना और कुरआन के सही मअनी बयान करना।

o लोगों के दिलों का तज़किया करना अर्थात उन्हें पवित्र बनाना और उन की हिदायत करना।[2]

इमाम की विशेषताएं

पैगम्बरे इस्लाम (स.) का जानशीन अर्थात इमाम, दीन को ज़िन्दा रखता और इंसानी समाज की ज़रूरतों को पूरा करता है। इमाम के व्यक्तित्व में इमामत के महान पद के कारण कुछ विशेषताएं पाई जाती हैं जिन में से कुछ मुख्य विशेषताएं निम्न लिखित हैं।

v इमाम, मुत्तक़ी, परहेज़गार और मासूम होता है, जिसकी वजह से उससे एक छोटा गुनाह भी नहीं हो सकता।

v इमाम के इल्म का आधार पैगम्बरे इस्लाम (स.) का इल्म होता है और वह अल्लाह के इल्म से संपर्क में रहता है, अतः वह भौतिक व आध्यात्मिक, दीन और दुनिया की तमाम मुश्किलों के हल का ज़िम्मेदार होता है।

v इमाम में तमाम फ़ज़ायल (सद्गुण) मौजूद होते हैं और वह उच्च अखलाक का मालिक होता है।

v दीन के आधार पर इंसानी समाज को सही रास्ते पर चलाने की योग्यता रखता है।

उरोक्त वर्णित विशेषताओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि इमाम का चुनाव जनता के बस से बाहर है। अतः सिर्फ़ खुदा वन्दे आलम ही अपने असीम इल्म के आधार पर पैगम्बरे इस्लाम (स.) के जानशीन (इमाम) का चुनाव कर सकता है। अतः इमाम की विशेषताओं में सब से बड़ी व मुख्य विशेषता उसका खुदा वन्दे आलम की तरफ़ से मन्सूब नियुक्त) होना है।

प्रिय: पाठको इमाम की इन विशेषताओं के महत्व को ध्यान में रखते हुए हम यहाँ पर इन में से हर विशेषता के बारे में संक्षेप में लिख रहे हैं।

इमाम का इल्म

इमाम, जिस पर लोगों की हिदायत और रहबरी की ज़िम्मेदारी होती है, उसके लिए ज़रूरी है कि दीन के तमाम पहलुओं को पहचानता हो और उसके कानूनों से पूर्ण रूप से परिचित हो। कुरआने करीम की तफ़्सीर को जानता हो और पैग़म्बरे इस्लाम (स.) की सुन्नत को भी पूरी तरह से जानता हो ताकि अल्लाह को पहचनवाने वाली चीज़ों और दीन की शिक्षाओं को भली भाँती स्पष्ट रूप से बयान करे और जनता के विभिन्न सवालों के जवाब दे तथा उनका बेहतरीन तरीके से मार्गदर्शन करे। स्पष्ट है कि ऐसी ही इल्म रखने वाले इंसान पर लोगों को विश्वास हो सकता है, और ऐसा इल्म सिर्फ़ खुदा वन्दे आलम के असीम इल्म से सम्पर्क रहने की सूरत में ही मुम्किन है। इसी वजह से शिया इस बात पर यक़ीन रखते हैं कि पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के जानशीन (इमाम) का इल्म खुदा के असीम इल्म से संबंधित होता है।

हज़रत इमाम अली (अ. स.) सच्चे इमाम की निशानियों के बारे में फरमाते हैं।

“इमाम , अल्लाह के द्वारा हलाल व हराम किये गये कामों, विभिन्न आदेशों, अल्लाह के अम्र व नही और लोगों की ज़रूरतों का सब से ज़्यादा जानने वाला होता है। ”[3]

इमाम की इस्मत

इमाम की महत्वपूर्ण विशेषताओं और इमामत की आधारभूत शर्तों में से एक शर्त इस्मत है। (इस्मत यानी इमाम का मासूम होना) इस्मत एक ऐसा मल्का है जो हकीकत के इल्म और मज़बूत इरादे से वजूद में आता है। चूँकि इमाम में ये दोनों चीज़ें पाई जाती हैं इस लिए वह हर गुनाह और खता से दूर रहता है। इमाम भी दीन की शिक्षाओं को जानने, उन्हें बयान करने, उन पर अमल करने और इस्लामी समाज की अच्छाईयों और बुराईयों की पहचान के बारे में खता व ग़लती से महफूज़ रहता है।

इमाम की इस्मत के लिए कुरआन, सुन्नत और अक्ल से बहुत सी दलीलें पेश की गई हैं। उन में से कुछ महत्वपूर्ण दलीलें निम्न लिखित हैं हैं।

1. दीन और दीनदारी की हिफाज़त इमाम की इस्मत पर आधारित है। क्यों कि इमाम पर लोगों को दीन की तरफ़ हिदायत करने और दीन को तहरीफ़ (परिवर्तन) से बचाये रखने की ज़िम्मेदारी होती है। इमाम का कलाम (प्रवचन), उनका व्यवहार और उनके द्वारा अन्य लोगों के कामों का समर्थन या खंडन करना समाज के लिए प्रभावी होता है। अतः इमाम दीन को समझने और उस पर अमल करने (क्रियान्वित होने) में हर ख़ता व ग़लती से सुरक्षित होना चाहिए ताकि अपने मानने वालों को सही तरीके से हिदायत कर सके।

2. समाज को इमाम की ज़रूरत की एक दलील यह भी है कि जनता दीन, दीन के अहकाम और शरियत के क़ानूनों को समझने में ख़ता व ग़लती से ख़ाली नहीं हैं। अतः अगर उनका रहबर, इमाम या हादी भी उन्हीं की तरह हो तो फिर उस इमाम पर किस तरह से भरोसा किया जा सकता है ? दूसरे शब्दों में इस तरह कहा जा सकता है कि अगर इमाम मासूम न हो तो जनता उसका अनुसरण करने और उसके हुक्म पर चलने में शक व संकोच करेगी।[4]

इमाम की इस्मत पर कुरआने करीम की आयतें भी दलालत करती हैं जिन में सू़ह ए बकरा की 124 वीं आयत है, इस आयते शरीफ़ा में बयान हुआ है कि जब खुदा वन्दे आलम ने जनाबे इब्राहीम (अ. स.) को नबूवत के बाद इमामत का बलन्द (उच्च) दर्जा दिया तो उस मौके पर हज़रत इब्राहीम (अ. स.) ने खुदा वन्दे

आलम की बारगाह में दुआ की कि इस ओहदे को मेरी नस्ल में भी बाकी रखना, जनाबे इब्राहीम (अ.स.) की इस दुआ पर खुदा वन्दे आलम ने फरमाया:

यह मेरा ओहदा (इमामत) ज़ालिमों और सितमगरों तक नहीं पहुच सकता, यानी इमामत का यह ओहदा हज़रत इब्राहीम (अ. स.) की नस्ल में उन लोगों तक पहुंचेगा जो ज़ालिम नहीं होंगे।

हालांकि कुरआने करीम ने खुदा वन्दे आलम के साथ शिर्क को अज़ीम जुल्म करार दिया है और अल्लाह के हुक्म के विपरीत काम करने को अपने नफ़स (आत्मा) पर जुल्म माना है और यह गुनाह है। यानी जिस इंसान ने अपनी ज़िन्दगी के किसी भी हिस्से में कोई गुनाह किया है, वह ज़ालिम है अतः वह किसी भी हालत में इमामत के ओहदे के योग्य नहीं हो सकता है।

दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि इस बात में कोई शक नहीं है कि जनाबे इब्राहीम (अ. स.) ने इमामत को अपनी नस्ल में से उन लोगों के लिए नहीं मांगा था, जिन की पूरी उम्र गुनाहों में गुज़रे या जो पहले नेक हों और बाद में बदकार हो जायें। अगर इस बात को आधार मान कर चलें तो सिर्फ़ दो किस्म के लोग बाकी रह जाते हैं।

1. वह लोग जो शुरु में गुनहगार थे, लेकिन बाद में तौबा कर के नेक हो गए।
2. वह लोग जिन्होंने अपनी पूरी ज़िन्दगी में कोई गुनाह न किया हो।
3. खुदा वन्दे आलम ने अपने कलाम में पहली किस्म को अलग कर दिया, यानी पहले गिरोह को (वह लोग जो शुरु में गुनहगार थे, लेकिन बाद में तौबा कर के नेक हो गए।) इमामत नहीं मिलेगी इस का नतीजा यह निकलता है कि इमामत का ओहदा सिर्फ दूसरे गिरोह से मख्सूस हैं, यानी उन लोगों से जिन्होंने अपनी ज़िन्दगी में कोई गुनाह न किया हो।

इमाम, समाज को व्यवस्थित करने वाला होता है

चूँकि इंसान एक समाजिक प्राणी है और समाज इसके दिल व जान और व्यवहार को बहुत ज़्यादा प्रभावित करता है, अतः इंसान की सही तरबियत और अल्लाह की तरफ़ बढ़ने के लिए समाजिक रास्ता हमवार होना चाहिए और यह चीज़ इलाही और दीनी हुक्मत के द्वारा ही मुम्किन हो सकती है। अतः ज़रूरी है कि लोगों का इमाम व हादी ऐसा होना चाहिए जिसमें समाज को चलाने व उसे दिशा देने की योग्यता पाई जाती हो और वह कुरआन की शिक्षाओं और नबी की

सुन्नत (कार्य शैली) का सहारा लेते हुए बेहतरीन तरीके से इस्लामी हुकूमत की बुनियाद डाल सके।

इमाम का अखलाक बहुत अच्छा होता है

इमाम चूँकि पूरे इंसानी समाज का हादी (मार्गदर्शक) होता है अतः उसके लिए ज़रूरी है कि वह तमाम बुराईयों से पाक हो और उसके अन्दर बेहतरीन अखलाक पाया जाता हो, क्यों कि वह अपने मानने वालों के लिए इंसाने कामिल का बेहतरीन नमूना माना जाता है।

हज़रत इमामे रिज़ा (अ. स.) फरमाते हैं कि :

इमाम की कुछ निशानियां होती हैं, जैसे, वह सब से बड़ा आलिम, सब से ज़्यादा नेक, सब से ज़्यादा हलीम (बर्दाश्त करने वाला), सब से ज़्यादा बहादुर, सब से ज़्यादा सखी (दानी) और सब से ज़्यादा इबादत करने वाला होता है।[5]

इसके अलावा चूँकि इमाम, पैग़म्बरे इस्लाम (स.) का जानशीन (उत्तराधिकारी) होता है, और वह हर वक़्त इंसानों की तालीम व तरबियत की कोशिश करता रहता

है अतः उसके लिए ज़रूरी है कि वह अखलाक के मैदान में दूसरों से ज़्यादा से सुसज्जित हो।

हज़रत इमाम अली (अ. स.) फरमाते हैं कि :

जो इंसान (अल्लाह के हुक्मे) खुद को लोगों का इमाम बना ले उसके लिए ज़रूरी है कि दूसरों को तालीम देने से पहले खुद अपनी तालीम के लिए कोशिश करे, और ज़बान के द्वारा लोगों की तरबियत करने से पहले, अपने व्यवहार व किरदार से दूसरों की तरबियत करे।[6]

इमाम खुदा की तरफ़ से मंसूब (नियुक्त) होता है

शिया मतानुसार पैग़म्बर (स.) का जानशीन (इमाम) सिर्फ़ अल्लाह के हुक्म से चुना जाता है और वही इमाम को मंसूब (नियुक्त) करता है। जब अल्लाह किसी को इमाम बना देता है तो पैग़म्बर (स.) उसे इमाम के रूप में पहचनवाते हैं। अतः इस मसले में किसी भी इंसान या गिरोह को हस्तक्षेप का हक़ नहीं है।

इमाम के अल्लाह की तरफ़ से मंसूब होने पर बहुत सी दलीलें हैं, उनमें से कुछ निम्न लिखित हैं।

1. कुरआने करीम के अनुसार खुदा वन्दे आलम तमाम चीज़ों पर हाकिमे मुतलक़ (जो समस्त चीज़ों को हुक़म देता है या जिसका हुक़म हर चीज़ पर लागू होता है, उसे हाकिमे मुतलक़ कहते हैं।) है और उसकी इताअत (अज्ञा पालन) सब के लिए ज़रूरी है। ज़ाहिर है कि यह हाकमियत खुदा वन्दे आलम की तरफ़ से (इसकी योग्यता रखने वाले) किसी भी इंसान को दी जा सकती है। अतः जिस तरह नबी और पैग़म्बर (अ. स.) खुदा की तरफ़ से नियुक्त होते हैं, उसी तरह इमाम को भी खुदा नियुक्त करता है और इमाम लोगों पर विलायत रखता है यानी उसे समस्त लोगों पर पूर्ण अधिकार होता है।

2. इस से पहले (ऊपर) इमाम के लिए कुछ खास विशेषताएं लिखी गई हैं जैसे इस्मत, इल्म आदि....., और यह बात स्पष्ट है कि इन ऐसी विशेषताएं रखने वाले इंसान की पहचान सिर्फ़ खुदा वन्दे आलम ही करा सकता है, क्योंकि वही इंसान के ज़ाहिर व बातिन (प्रत्यक्ष व परोक्ष) से आगाह है, जैसा कि खुदा वन्दे आलम कुरआने मजीद में जनाबे इब्राहीम (अ. स.) को संबोधित करते हुए फरमाता है:

हम ने, तुम को लोगों का इमाम बनाया।[7]

सबसे अच्छी बात

अपनी बात के इस आखरी हिस्से में हम उचित समझते हैं कि आठवें इमाम हज़रत अली रिज़ा (अ.स.) की वह हदीस बयान करें जिसमें इमाम (अ. स.) इमाम की विशेषताओं का वर्णन किया है।

इमाम (अ. स.) ने कहा कि : जिन्होंने इमामत के बारे में मत भेद किया और यह समझ बैठे कि इमामत एक चुनाव पर आधारित मसला है, उन्होंने अपनी अज्ञानता का सबूत दिया।..... क्या जनता जानती है कि उम्मत के बीच इमामत की क्या गरीमा है, जो वह मिल बैठ कर इमाम का चुनाव कर ले।

इसमें कोई शक नहीं है कि इमामत का ओहदा बहुत बुलन्द, उच्च व महत्वपूर्ण है और उस की गहराई इतनी ज़्यादा है कि लोगों की अक्ल उस तक नहीं पहुँच पाती है या वह अपनी राय के द्वारा उस तक नहीं पहुँच सकते हैं।

बेशक इमामत वह ओहदा है कि खुदा वन्दे आलम ने जनाबे इब्राहीम (अ. स.) को नबूवत व खुल्लत देने के बाद तीसरे दर्जे पर इमामत दी है। इमामत अल्लाह

व रसूल (स.) की खिलाफत और हज़रत अमीरुल मोमेनीन अली (अ. स.) व हज़रत इमाम हसन व हज़रत इमाम हुसैन (अ. स.) की मीरास है।

सच्चाई तो यह है कि इमामत, दीन की बाग डोर, मुसलमानों के कामों की व्यवस्था की बुनियाद, मोमिनीन की इज़ज़त, दुनिया की खैरो भलाई का ज़रिया है और नमाज़, रोज़ा, हज, जिहाद, के कामिल होने का साधन है।, इमाम के ज़रिये ही (उस की विलायत को क़बूल करने की हालत में) सरहदों की हिफ़ाज़त होती है।

इमाम अल्लाह की तरफ़ से हलाल कामों को हलाल और उसकी तरफ़ से हराम किये गये कामों को हराम करता है। वह खुदा वन्दे आलम के हकीकी हुकम के अनुसार हुकम करता है) हुदूदे उलाही को कायम करता है, खुदा के दीन की हिमायत करता है, और हिकमत व अच्छे वाज़ व नसीहत के ज़रिये, बेहतरीन दलीलों के साथ लोगों को खुदा की तरफ़ बुलाता है।

इमाम सूरज की तरह उदय होता है और उस की रौशनी पूरी दुनिया को प्रकाशित कर देती है, और वह खुद उफ़क़ (अक्षय) में इस तरह से रहता है कि उस तक हाथ और आँखें नहीं पहुँच पाते। इमाम चमकता हुआ चाँद, रौशन चिराग, चमकने वाला नूर, अंधेरो, शहरो व जंगलों और दरियाओं के रास्तों में रहनुमाई

(मार्गदर्शन) करने वाला सितारा है, और लड़ाई झगड़ों व जिहालत से छुटकारा दिलाने वाला है।

इमाम हमदर्द दोस्त, मेहरबान बाप, सच्चा भाई, अपने छोटे बच्चों से प्यार करने वाली माँ जैसा और बड़ी - बड़ी मुसीबतों में लोगों के लिए पनाह गाह होता है। इमाम गुनाहों और बुराईयों से पाक करने वाला होता है। वह मखसूस बुर्दबारी और हिल्म (धैर्य) की निशानी रखता है। इमाम अपने ज़माने का तन्हा इंसान होता है और ऐसा इंसान होता है, जिसकी अज़मत व उच्चता के न कोई करीब जा सकता है और न कोई आलिम उस की बराबरी कर सकता है, न कोई उस की जगह ले सकता है और न ही कोई उस जैसा दूसरा मिल सकता है।

अतः इमाम की पहचान कौन कर सकता है ? या कौन इमाम का चुनाव कर सकता ? यहाँ पर अक़ल हैरान रह जाती है, आँखें बे नूर, बड़े छोटे और बुद्धिजीवी दाँतों तले ऊँगलियाँ दबाते हैं, खुतबा (वक्ता) लाचार हो जाते हैं और उन में इमाम का श्रेष्ठ कामों की तारीफ़ करने की ताक़त नहीं रहती और वह सभी अपनी लाचारी का इकरार करते हैं।[8]

[1]कुरआने करीम में पैग़म्बरे अकरम (स.) से कहा गया है कि हम ने तुम पर ज़िक्र (कुरआने करीम) नाज़िल किया ताकि आप उस में बयान होने वाली चीज़ों को लोगों के सामने बयान करें। (सूरह ए नहल, आयत न. 44)

[2]. यहाँ पर यह बात बताना उचित होगा कि मासूम इमाम के द्वारा (हुकूमत की स्थापना) रास्ता हमवार होने की सूरत में ही मुम्किन है, लेकिन दूसरी तमाम जिम्मेदारियाँ (यहां तक कि गैबत के ज़माने में भी) अंजाम देना ज़रूरी है। अगरचे इमाम (अ. स.) के जुहूर और लोगों के दरमियान ज़ाहिर बज़ाहिर होने की सूरत में ये बात सब पर ज़ाहिर है। इस के अलावा दूसरा नुक्ता यह है कि इस हिस्से में जो कुछ बयान हुआ है उस में लोगों की मअनवी (आध्यात्मिक) जिन्दगी में इमाम की ज़रूरत है, लेकिन तमाम दुनिया को (वजूदे इमाम) की ज़रूरत है इस मतलब को (गायब इमाम के फ़ायदे) नामक बहस में बयान किया जायेगा।

[3] . मिज़ानुल हिक्मत , जिल्द न. 1, हदीस 861.

[4] . इस के अलावा अगर इमाम खता व गल्ती से सुरक्षित न हो तो फिर किसी दूसरे इमाम की तलाश की जायेगी ताकि लोगों की यह ज़रूरत पूरी हो सके और अगर वह भी खताओं से सुरक्षित न हो तो उसके फिर किसी तीसरे इमाम को तलाश किया जायेगा और यह सिलसिला इसी तरह आगे बढ़ता चला जायेगा और ऐसा सिलसिला फलसफी लिहाज़ से बातिल और बेबुनियाद है जिस को फलसफे की इस्तेलाह में तसलसुल कहा जाता है।

[5] मआनीयुल अखबार, जिल्द न. 4, पेज न. 102.

[6] मिज़ानुल हिक्मत, बाब 147, हदीस, 85.

[7] सूरह बकरा, आयत न. 124,

[8] . उसूले काफ़ी, जिल्द न. 1, बाब 15, हदीस, 1, पेज न. 255,

इन्तेज़ार 1

जब काले बादल सूरज के तेजस्वी चेहरे को छिपा दें, दशत व जंगल सूरज की चरण स्पर्श से वंचित हो जायें और पेड़ पौधे व फल फूल उस सूरज की मुहब्बत की दूरी से बेजान हो जायें तो उस वक़्त क्या किया जाये ? जब अच्छाईयों का मुजस्समा और खुबसूरतियों का आइना अपने चेहरे पर ग़ैबत की नकाब डाल ले और इस दुनिया में रहने वाले उसके लाभ से वंचित हो जायें तो क्या करना चाहिए ?

चमन के फूलों को इन्तेज़ार है कि मेहरबान बाग़बान उनको देखता रहे और वह उसकी मुहब्बत भरी बातों से जीवन अमृत पियें। दिल में शौक व उमंग है और आँखें बेताब हैं कि किसी तरह जल्दी से जल्दी उस के नूरानी चेहरे की ज़ियारत हो जाये। यहीं से इन्तेज़ार का अर्थ व मअना समझ में आते हैं। जी हाँ ! सभी इन्तेज़ार कर रहे हैं कि वह आयें और अपने साथ खुशियों का तोहफ़ा ले कर आयें।

वास्तव में यह इन्तेज़ार कितना दिलकश, खुबसूरत, हसीन व मिठास से भरा हुआ है ! अगर इस की खुबसूरती को नज़र में रखा जाये और इस के मिठास को दिल की गहराईयों से चखा जाये, तो यह बात समझ में आ सकती है।

इन्तेज़ार की हकीकत और उसकी महत्ता

इन्तेज़ार के विभिन्न अर्थ व मअनी वर्णन किये गए हैं, लेकिन इस शब्द पर गौर व फिक्र के ज़रिये इसके अर्थ की वास्तविकता तक पहुँचा जा सकता है। इन्तेज़ार का अर्थ किसी के लिए आँखे बिछाना है। यह इन्तेज़ार शर्ते पूरी करने व रास्ता तैयार करने के लिहाज़ से महत्व पैदा करता है और इस से बहुत से नतीजे ज़ाहिर होते हैं। इन्तेज़ार सिर्फ़ रुह से संबंधित और आंतरिक हालत का नाम नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी हालत होती है जो अन्दर से बाहर की तरफ़ असर करती है और इस के नतीजे में इंसान अपने अन्दर के एहसास के अनुसार काम करता है। इसी वजह से रिवायतों में इन्तेज़ार को एक बेहतरीन अमल बल्कि तमाम आमाल में बेहतरीन अमल की शकल में याद किया गया है। इन्तेज़ार, इन्तेज़ार करने वाले को एक हैसियत देता है और उसके कामों व कोशिशों की एक खास तरफ़ हिदायत करता है। इन्तेज़ार वह रास्ता है जो उसी चीज़ पर जा कर खत्म होता है जिस का इंसान को इन्तेज़ार होता है।

अतः इन्तेज़ार का अर्थ हाथ पर हाथ रख कर बैठना नहीं है, इंसान दरवाज़े पर आँखें जमाए रखे और हसरत लिए बैठा रहे, इसे इन्तेज़ार नहीं कहते, बल्कि हकीकत तो यह है कि इन्तेज़ार में खुशी, शौक व जज़्बा छुपा होता है।

जो लोग किसी अपने महबूब मेहमान का इन्तेज़ार करते हैं, वह खुद को और अपने चारों ओर मौजूद चीज़ों को उस मेहमान के लिए तैयार करते हैं और उसके रास्ते में मौजूद रुकावटों को दूर करते हैं।

हमारी बात उस ला जवाब घटना के इन्तेज़ार के बारे में है जिसकी खूबसूरती और कमाल की कोई हद नहीं है। इन्तेज़ार उस ज़माने का है जिसकी खुशी और मज़े की मिसाल पिछले ज़माने में नहीं मिलती और इस दुनिया में अब तक ऐसा ज़माना नहीं आया है। हमें हज़रत इमामे ज़माना (अ. स.) की उस विश्वव्यापी हुकूमत के स्थापित होने का इन्तेज़ार है जिसे रिवायतों में इन्तेज़ारे फर्ज के नाम से याद किया गया है और जिसको आमाल व इबादत में बेहतरीन अमल बताया गया है, बल्कि जिसे तमाम ही आमाल क़बूल होने का वसीला करार दिया गया है।

हज़रत पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने फरमाया :

मेरी उम्मत का सब से बेहतरीन अमल (इन्तेज़ारे फरज) है...[1]

हज़रत इमाम सादिक (अ. स.) ने अपने असहाब से फरमाया :

क्या मैं तुम लोगों को उस चीज़ के बारे में बताऊँ जिसके बग़ैर खुदा वन्दे आलम अपने बन्दों से कोई भी अमल क़बूल नहीं करता ?! सब ने कहा : जी हाँ।
इमाम (अ. स.) ने फरमाया :

खुदा के एक होने का इकरार, पैग़म्बरे इस्लाम (स.) की नबूव्वत की गवाही, खुदा वन्दे आलम की तरफ़ से नाज़िल होने वाली चीज़ों का इकरार, हमारी विलायत और हमारे दुशमनों से नफ़रत व दूरी (यानी ख़ास तौर पर हम इमामों के दुशमनों से दूरी), अइम्मा (अ. स.) की इताअत (आज़ापालन) करना, तक्रवा व परहेज़गारी को अपनाना, कोशिश करना व बुर्दबारी व सयंम से काम करना और क़ाइम आले मुहम्मद (अ. स.) का इन्तेज़ार...[2]

बस इन्तेज़ारे फरज, ऐसा इन्तेज़ार है जिसकी कुछ विशेषताएं हैं और कुछ अपने तरीके के अलग ही एहसास हैं और उनको पूर्ण रूप से पहचानना ज़रूरी है ताकि उसके बारे में बयान किये जाने वाले तमाम फज़ाइल का राज़ मालूम हो सके।

इमामे ज़माना (अ. स.) के इन्तेज़ार की विशेषताएं

जैसे कि हम ने ऊपर उल्लेख किया है कि इन्तेज़ार इंसान की फितरत में शामिल है और हर कौम, दीन व मज़हब में इन्तेज़ार का तस्व्वुर पाया जाता है। इंसान की नीजी और सामाजिक ज़िन्दगी में पाया जाने वाला साधारण इन्तेज़ार चाहे कितना ही महत्वपूर्ण हो, वह हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के इन्तेज़ार के मुक़ाबले में बहुत छोटा है क्योंकि उनके ज़हूर के इन्तेज़ार की कुछ खास विशेषताएं हैं ।

इमाम ज़माना (अ. स.) के ज़हूर का इन्तेज़ार, एक ऐसा इन्तेज़ार है जो संसार के आरम्भ से मौजूद था। यानी बहुत पुराने ज़माने में भी नबी (अ. स.) और वली उनके ज़हूर की खुश खबरी सुनाते थे और हमारे सभी मासूम इमाम (अ. स.) उनकी हुकूमत के ज़माने की तमन्ना रखते थे।

हज़रत इमाम सादिक (अ. स.) फरमाते हैं कि

"अगर मैं उनके (हज़रत इमाम महदी अ.स.) ज़माने में होता तो तमाम उम्र उनकी खिदमत करता...। "[3]

इमाम महदी (अ. स.) का इन्तेज़ार, एक विश्व सुधारक का इन्तेज़ार है, न्याय व समानता पर आधारित एक विश्वव्यापी हुकूमत का इन्तेज़ार है, और समस्त अच्छाइयों के फलने फूलने व लागू होने का इन्तेज़ार है। अतः आज इंसानी समाज इसी इन्तेज़ार में अपनी आँखे बिछाए हुए है और खुदा द्वारा प्रदान की गई पाक व पवित्र फ़ितरत के आधार पर उसकी तमन्ना करता है। यह इंसानी समाज किसी भी ज़माने में पूर्ण रूप से उस तक नहीं पहुँच सका है। हज़रत इमाम महदी (अ. स.) उस शख़िसयत का नाम है जो न्याय, समानता, आध्यात्म, सयंम, बराबरी, ज़मीन की आबादी, मेल मुहब्बत, अकल की परिपक्वता व पूर्णता, और इंसानों के विभिन्न इल्मों की तरक्की को तोहफ़े में लायेंगे तथा साम्राज्यवाद व गुलामी, जुल्म व अत्याचार, और अखलाकी बुराईयों को जड़ से मिटा कर उनको ख़त्म करना उनकी हुकूमत का महत्वपूर्ण काम होगा।

हज़रत इमाम महदी (अ. स.) का इन्तेज़ार, ऐसा इन्तेज़ार है जिसके फलने फूलने का रास्ता हमवार होने से खुद इन्तेज़ार को भी चार चाँद लग जायेंगे और वह ऐसा आखिरी ज़माना होगा जब तमाम इंसान एक समाज सुधारक और निजात व मुक्ति देने वाले की तलाश में होंगे। उस समय वह आयेंगे और अपने मददगारों के साथ बुराईयों के खिलाफ़ आन्दोलन चलायेंगे। ऐसा नही होगा कि वह आते ही

अपने किसी मोज़े (चमत्कार) से पूरी दुनिया के निज़ाम व व्यवस्था को बदल देंगे।

हज़रत इमाम महदी (अ. स.) का इन्तेज़ार, उनका इन्तेज़ार करने वालों में उनकी मदद का शौक पैदा करता है और इंसान को हैसियत व ज़िन्दगी देता है और साथ ही साथ उनको उद्देश्यहीनता व भटकने से बचाता है।

प्रयः पाठकों ! यह हैं उस इन्तेज़ार की कुछ विशेषताएं जो पूरे इतिहास की बराबर व्यापकता रखती हैं और हर इंसान की रुह में उस की जड़ें मिलती हैं। इसी लिए कोई दूसरा इन्तेज़ार इस महान इन्तेज़ार का ज़रा बराबर भी मुकाबला नहीं सकता। अतः उचित है कि अब हम हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के इन्तेज़ार के विभिन्न पहलुओं और उसकी निशानियों व फ़ायदों को पहचानें और उनके ज़हूर का इन्तेज़ार करने वालों की ज़िम्मेदारियों और इस इन्तेज़ार के बे मिसाल सवाब के बारे में बातें करें।

इन्तेज़ार के पहलू

खुद इंसान की ज़ात में विभिन्न पहलु पाये जाते हैं, एक तरफ़ जहाँ उस में थयोरिकल व परैक्टिकल पहलू पाया जाता हैं, वहीं दूसरी तरफ़ उस में व्यक्तिगत और सामाजिक पहलू भी पाया जाता है। एक अन्य दृष्टिकोण से इंसान में जिस्म के पहलू के साथ रुह और नफ़स का पहलू भी मौजूद होता है। इस बात में कोई शक नहीं है कि इन सब पहलुओं के लिए निश्चित क़ानूनों की ज़रूरत है, ताकि उनके अन्तर्गत इंसान के लिए ज़िन्दगी का सही रास्ता खुल जाये और भटकाने व गुमराह करने वाला रास्ते बन्द हो जायें।

हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के ज़हूर का इन्तेज़ार, इन्तेज़ार करने वाले के तमाम पहलुओं को प्रभावित करता है। इंसान के सोच विचार व चिंतन का पहलू जो कि इंसान के व्यवहार व आमाल (क्रिया कलापों) का आधारभूत पहलू है, यह इंसानी ज़िन्दगी के बुनियादी अक़ीदों की हिफ़ाज़त करता है। दूसरे शब्दों में इस तरह कहा जा सकता है कि सही इन्तेज़ार इस बात का तकाज़ा करता है कि इन्तेज़ार करने वाला अपने ईमान व फ़िक्र की बुनियादों को मज़बूत करे ताकि गुमराह करने वाले मज़हब के जाल में न फँस सके। या हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की ग़ैबत लंबी हो जाने की वजह से ना उम्मीदी के दलदल में न फँस सके।

हज़रत इमाम मुहम्मद बाकिर (अ. स.) फरमाते हैं कि

"लोगों के सामने एक ऐसा ज़माना आयेगा, जब उनका इमाम गायब होगा, खुश नसीब है वह इंसान जो उस ज़माने में हमारे अम्र (यानी विलायत) पर बाक़ी रहे...।

"[4]

यानी ग़ैबत के ज़माने में दुशमन विभिन्न शुबहें पैदा कर के शिओं के सही अक़ीदों को ख़त्म करने की कोशिश में लगा हुआ है, इस लिए हमें इन्तेज़ार के ज़माने में अपने अक़ीदों की हिफ़ाज़त करनी चाहिए।

इन्तेज़ार, अपने अमली पहलू में इंसान के कामों व किरदार को सही रास्ता दिखाता है। एक सच्चे मुन्तज़िर (इन्तेज़ार करने वाला) को अमल के मैदान में यह कोशिश करनी चाहिए कि इमाम महदी (अ. स.) की हक़ व सच्चाई पर आधारित हुकूमत का रास्ता हमवार हो जाये। अतः मुन्तज़िर को इस बारे में अपने और समाज के सुधार के लिए कसर बाँध लेनी चाहिए। मुन्तज़िर को चाहिए कि अपनी व्यक्तिगत ज़िन्दगी में अपनी आध्यात्मिक ज़िन्दगी और अखलाक़ी फ़ज़ीलतों (श्रेष्ठताओं) को उच्चता प्रदान करने की कोशिश करे और अपने जिस्म व बदन को मज़बूत बनाये ताकि एक कारामद ताक़त के लिहाज़ से नूरानी मोर्चे के लिए तैयार रहे।

हज़रत इमाम सादिक (अ. स.) फरमाते हैं कि

"जो इंसान इमाम काइम (अ.स.) के मददगारों में शामिल होना चाहता है उसे इन्तेज़ार करना चाहिए और इन्तेज़ार की हालत में तक़वे व परेहेज़गारी का रास्ता अपनाना चाहिए और अच्छे अखलाक़ व सदव्यवहार से सुसज्जित होना चाहिए...[5]

इस इन्तेज़ार की एक विशेषता यह है कि यह इंसान को व्यक्तिगत ज़ीवन से ऊपर उठा कर उसे समाज के हर इंसान से जोड़ देता है। अर्थात इन्तेज़ार न सिर्फ़ यह कि इंसान के व्यक्तिगत जीवन में प्रभारी होता है बल्कि समाज में इंसानों के लिए एक खास योजना पेश करता है और समाज में सकारात्मक क़दम उठाने का शौक भी दिलाता है। चूँकि हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की हुकूमत सार्वजनिक है, अतः हर इंसान को अपनी सामर्थ्य अनुसार समाज सुधार के लिए काम करना चाहिए और समाज में फैली बुराईयों के प्रति खामोश व लापरवाह नहीं रहना चाहिए, क्यों कि विश्वव्यापी सुधार करने वाले के मुन्तज़िर को फिक्र व अमल के आधार पर सुधार व भलाई के रास्ते को अपनाना चाहिए।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इन्तेज़ार एक ऐसा मुबारक झरना है जिसका जीवन अमृत इंसान और समाज की रगों में जारी है और यह ज़िन्दगी के हर पहलू में इंसान को अल्लाह के रंग में रंगता है। अब आप ही फैसला करें कि अल्लाह के रंग से अच्छा रंग कौनसा हो सकता है ?!

कुरआने करीम में वर्णन होता है कि :

सिबगतल्लाहे व मन अहसनु मिन अल्लाहे सिबगतन व नहनु लहु आबेदून....

[صِبْغَةَ اللَّهِ وَمَنْ أَحْسَنُ مِنَ اللَّهِ صِبْغَةً وَنَحْنُ لَهُ عَابِدُونَ] 6]

रंग तो सिर्फ़ अल्लाह का रंग है और उससे अच्छा किस का रंग हो सकता है और हम सब उसी के इबादत गुज़ार हैं।

उपरोक्त उल्लेखित अंशों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि हज़रत इमामे ज़माना (अ. स.) का इन्तेज़ार करने वालों की ज़िम्मेदारी अल्लाह के रंग में रंगे जाने के अलावा कुछ नहीं है। इन्तेज़ार की बरकत से यह रंग इंसान की व्यक्तिगत व सामाजिक ज़िन्दगी के विभिन्न पहलुओं में झलकता है। अगर इस नज़र से

देखा जाये तो हम मिनतज़िरोँ की यह ज़िम्मेदारियाँ हमारे लिए मुश्किल नहीं होंगी, बल्कि एक अच्छी घटना के रूप में हमारी ज़िन्दगी के हर पहलू को बेहतरीन आध्यात्मिक रूप देंगी । वास्तव में अगर देश का मेहरबान बादशाह और काफ़ले का प्यारा सरदार हमें एक अच्छे व लायक सिपाही की हैसियत से ईमान के खेमे में बुलाए और हक व हकीकत के मोर्चे पर हमारे आने का इन्तेज़ार करे तो फिर हमें कैसा लगेगा ? क्या उस समय हमें अपनी इन ज़िम्मेदारियों को निभाने में कोई परेशानी होगी कि ये काम करो और ऐसे न बनो ?, या हम खुद इन्तेज़ार के रास्ते को पहचान कर अपने चुने हुए उद्देश्य व मक़सद की तरफ क़दम बढ़ाते हुए नज़र आयेंगे ?

इन्तेज़ार करने वालों की ज़िम्मेदारियाँ

मासूम इमामों की हदीसों और रिवायतों में ज़हूर का इन्तेज़ार करने वालों की बहुत सी ज़िम्मेदारियों का वर्णन हुआ है। हम यहाँ पर उन में से कुछ महत्वपूर्ण निम्न लिखित ज़िम्मेदारियों का उल्लेख कर रहे हैं ।

इमाम की पहचान

इन्तेज़ार के रास्ते को तय करना, इमाम (अ. स.) की शनाख्त और पहचान के बग़ैर संभव नहीं है। इन्तेज़ार की वादी में सब्र से काम लेते हुए अडिग रहना, इमाम (अ. स.) की सही शनाख्त से संबंधित है। अतः हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के नाम व नस्ब की शनाख्त के अलावा उनकी महानता, महत्ता और उनके ओहदे को पहचानना भी बहुत ज़रूरी है।

अबू नस्र, जो कि हज़रत इमाम हसन अस्करी (अ. स.) के सेवक थे, वह हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की ग़ैबत से पहले हज़रत इमाम हसन अस्करी (अ. स.) की सेवा में उपस्थित हुए। हज़रत इमाम महदी (अ. स.) ने उन से सवाल किया कि क्या आप मुझे पहचानते हैं ? उन्होंने जवाब दिया : जी हाँ ! आप मेरे मौला व आक्रा और मेरे मौला व आक्रा के बेटे हैं। इमाम (अ. स.) ने फरमाया : मेरा मक़सद ऐसी पहचान नहीं है, अबू नस्र ने कहा कि आप ही फरमाइये कि आप का मक़सद क्या था।

इमाम (अ. स.) ने फरमाया :

मैं पैगम्बरे इस्लाम (स.) का आखरी जानशीन हूँ, और खुदा वन्दे आलम मेरी बरकत की वजह से हमारे खानदान और हमारे शिओं से बलाओं व विपत्तियों को दूर करता है...।[7]

अगर इन्तेज़ार करने वालों को इमाम (अ. स.) की सही पहचान हो जाये तो फिर वह उसी वक़्त से खुद को इमाम (अ. स.) के मोर्चे पर देखेगा और एहसास करेगा कि वह इमाम (अ. स.) और उनके खेमे के नज़दीक है। अतः अपने इमाम के मोर्चे को मज़बूत बनाने में पल भर के लिए भी लापरवाही नहीं करेगा।

हज़रत इमाम मुहम्मद बाक़िर (अ. स.) ने फरमाया :

مَنْ مَاتَ وَ بُوعَ عَارِفٌ لِإِمَامِهِ لَمْ يَضُرَّهُ، تَقَدَّمَ بِدَا الْأَمْرِ أَوْ تَأَخَّرَ، وَ مَنْ مَاتَ وَ بُوعَ عَارِفٌ
8] [لِإِمَامِهِ كَانَ كَمَنْ بُوعَ مَعَ الْقَائِمِ فِي فَسْطَاطِهِ]

जो इंसान इस हालत में मरे कि अपने ज़माने के इमाम को पहचानता हो तो ज़हूर में जल्दी या देर से होन से उसे कोई नुकसान नहीं पहुँचाता, और जो इंसान इस हाल में मरे कि अपने ज़माने के इमाम को पहचानता हो तो वह उस इंसान की तरह है जो इमाम के खेमे में और इमाम के साथ हो।

उल्लेखनीय है कि यह शनाख्त और पहचान इतनी महत्वपूर्ण है कि मासूम इमामों (अ. स.) की हदीसों में बयान हुई है और इसको हासिल करने के लिए खुदा वन्दे आलम से मदद माँगनी चाहिए।

हज़रत इमाम सादिक (अ. स.) ने फरमाया :

हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की लंबी ग़ैबत के ज़माने में बातिल ख्याल के लोग अपने दीन और अक़ीदे में शक व शुब्हे में पड़ जायेंगे। इमाम (अ. स.) के खास शागिर्द जनाबे ज़ुरारा ने इमाम (अ. स.) से पूछा कि मौला अगर मैं उस ज़माने तक रहूँ तो क्या काम करूँ ?

हज़रत इमाम सादिक (अ. स.) ने फरमाया : इस दुआ को पढ़ना।

अल्लाहुम्म अर्रिफनी नफसक फइन्नलम तोअर्रिफनी नफसक लमआरिफ नबियक
अल्लाहुम्मा अर्रिफनी रसूलक फइन्नलम तोअर्रिफनी रसूलक लमआरिफ हुज्जतक
अल्लाहुम्म अर्रिफनी हुज्जतक फइन्नक लन तोअर्रिफनी हुज्जतक ज़ललतो अन
दीनी..

اللَّهُمَّ عَرِّفْنِي نَفْسَكَ فَإِنَّكَ إِنْ لَمْ تُعَرِّفْنِي نَفْسَكَ لَمْ أَعْرِفْ نَبِيَّكَ، اللَّهُمَّ عَرِّفْنِي رَسُولَكَ .
 فَإِنَّكَ إِنْ لَمْ تُعَرِّفْنِي رَسُولَكَ لَمْ أَعْرِفْ حُجَّتَكَ، اللَّهُمَّ عَرِّفْنِي حُجَّتَكَ فَإِنَّكَ إِنْ لَمْ تُعَرِّفْنِي حُجَّتَكَ
 9] ضَلَّتُ عَنْ دِينِي [9]

ऐ अल्लाह ! तू मुझे अपनी ज़ात की पहचान करा दे क्योंकि अगर तूने मुझे अपनी ज़ात की पहचान न कराई तो मैं तेरे नबी को नहीं पहचान सकता। ऐ अल्लाह : तू मुझे अपने रसूल की पहचान करा दे क्योंकि अगर तूने अपने रसूल की पहचान न कराई तो मैं तेरी हुज्जत को नहीं पहचान सकूंगा। ऐ अल्लाह ! तू मुझे अपनी हुज्जत की पहचान करा दे क्योंकि अगर तूने मुझे अपनी हुज्जत की पहचान न कराई तो मैं अपने दीन से गुमराह हो जाऊँगा।

प्रिय: पाठकों ! इस दुआ में इस संसार के निज़ाम व व्यवस्था में इमाम (अ. स.) की महानता व महत्ता की पहचान है...।[10] इमाम खुदा वन्दे आलम की तरफ से हुज्जत और पैगम्बरे इस्लाम (स.) का सच्चा जांनशीन और तमाम लोगों का हादी व इमाम होता है और उसकी इताअत (आज्ञा पालन) सब पर वाजिब है, क्यों कि उसकी इताअत खुदा वन्दे आलम की इताअत है।

इमाम की शनाख्त का दूसरा पहलू, इमाम (अ. स.) की सिफ़तों और उनकी सीरत की पहचान है।[11] शनाख्त का यह पहलू इन्तेज़ार करने वाले के व्यवहार को बहुत ज़्यादा प्रभावी करता है। यह बात स्पष्ट है कि इंसान को इमाम (अ. स.) की जितनी ज़्यादा पहचान होगी, उसकी ज़िन्दगी में उसके उतने ही ज़्यादा असर पैदा होंगे।

इमाम (अ.) को नमून ए अमल व आदर्श बनाना

जब इमाम (अ. स.) की सही पहचान हो जायेगी और उनके खुबसूरत जलवे हमारी नज़रों के सामने होंगे तो उस कमाल ज़ाहिर करने वाली उस ज़ात को नमूना व आदर्श बनाने की बात आयेगी।

पैग़म्बरे इस्लाम (स.) फरमाते हैं कि :

"खुश नसीब है वह इंसान जो मेरी नस्ल के काइम को इस हाल में देखे कि उस के क्रियाम (आन्दोलन) से पहले खुद उसका और उस से पहले इमामों का अनुसरण करे और उनके दुशमनों से दूरी व नफ़रत का ऐलान करे, तो ऐसे लोग मेरे दोस्त और मेरे साथी हैं और यही लोग मेरे नज़दीक मेरी उम्मत के सब से महान इंसान हैं..।[12]

वास्तव में जो इंसान तकवे, इबादत, सादगी, सखावत, सब्र और तमाम अखलाकी फज़ाइल में अपने इमाम का अनुसरण करे, उसका का रुतबा अपने इमाम के नज़दीक कितना ज़्यादा होगा और वह उनके पास पहुँचने से कितना गौरान्वित व सर बुलन्द होगा !!

क्या इस के अलावा और कुछ है कि जो इंसान दुनिया के सब से ख़ूबसूरत मंज़र को देखने का मुन्तज़िर हो, वह ख़ुद को अच्छाईयों से सुसज्जित करे और बुराईयों व बद अखलाकियों से दूर रहे और इन्तेज़ार के ज़माने में अपनी फ़िक्र व क्रिया कलापों की हिफ़ाज़त करता रहे, वरना आहिस्ता आहिस्ता बुराईयों के जाल में फँस जायेगा और उसके व इमाम के बीच फासला ज़्यादा होता जायेगा। ये एक ऐसी हकीकत है जो खतरों से परिचित करने वाले इमाम (अ. स.) की हदीस में में बयान हुई है। यह हदीस निम्न लिखित है।

[فَمَا يَحْسِبُنَا عَنْهُمْ إِلَّا مَا يَتَّصِلُ بِنَا مِمَّا نُكْرِبُهُ وَ لَا نُؤْتِرُهُ مِنْهُمْ] 13”

कोई भी चीज़ हमें हमारे शिओं से जुदा नहीं करती, मगर उनके वह बुरे काम जो हमारे पास पहुँचते हैं। न हम उन कामों को पसन्द करते हैं और न शिओं से उनको करने की उम्मीद रखते हैं।

इन्तेज़ार करने वालों की आखिरी तमन्ना यह है कि हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की वह विश्वव्यापी हुकूमत जो न्याय व समानता पर आधारित होगी, उसमें उनका भी कुछ हिस्सा हो और अल्लाह की उस आखिरी हुज्जत की मदद करने का गौरव उन्हें भी प्राप्त हो। लेकिन यह महान सफलता व गौरव खुद को बनाने संवारने और उच्च सदव्यवहार से सुसज्जित हुए बगैर संभव नहीं है।

हज़रत इमाम सादिक (अ. स.) फरमाते हैं कि

” مَنْ سَرَّهُ أَنْ يَكُونَ مِنْ أَصْحَابِ الْقَائِمِ فَلْيَنْتَظِرْ وَ لِيَعْمَلْ بِالْوَرَعِ وَ مَحَاسِنِ الْأَخْلَاقِ وَ بُؤِ
14] مُنْتَظِرٌ“

जो इंसान हज़रत काइम (अ. स.) के मददगारों में शामिल होना चाहता हो, उसे तक्रवे, पर्हेज़गारी और अच्छे अखलाक से सुसज्जित हो कर इमाम के ज़हूर का इन्तेज़ार करना चाहिए।

यह बात स्पष्ट है कि इस तमन्ना को पूरा करने के लिए खुद हज़रत इमाम महदी (अ. स.) से अच्छा कोई नमूना व आदर्श नहीं मिल सकता क्योंकि वह सभी अच्छाईयों, नेकियों और खुबसूरतियों का आइना हैं।

इमाम (अ. स.) को याद रखना

जो चीज़ हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की पहचान और उनका अनुसरण व पैरवी करने में मददगार साबित होगी और इन्तेज़ार की राह में सब्र व दृढ़ता प्रदान करेगी, वह, रुह व आत्मा के वैद्य व चिकित्सक (हज़रत इमाम महदी अ. स.) से हमेशा संबंध बनाये रखना है।

वास्तव में जब वह मेहरबान इमाम (अ. स.) हर वक़्त और हर जगह शिओं के हालात पर नज़र रखता और किसी भी भी वक़्त उनको नहीं भूलता तो क्या यह उचित है कि उसके चाहने वाले दुनिया के कामों में उलझ कर उस महबूब इमाम (अ. स.) को भूल जायें और उन से बेखबर हो जायें ?! नही दोस्ती व मुहब्बत का तकाज़ा यह है कि उन्हें हर काम में अपने और अन्य लोगों पर वरीयता दी जाये। जिस वक़्त दुआ के लिए मुसल्ले पर बैठें तो पहले उनके लिए दुआ करें, उनकी

सलामती और ज़हूर की दुआ करने के लिए अपने हाथों को ऊपर उठाये। इसके लिए खुद उन्हेंने फरमाया है :

"मेरे ज़हूर के लिए बहुत दुआ किया करो कि उसमें खुद तुम्हारी भलाई है।

"[15]

अतः हमारी ज़बान पर हमेशा यह निम्न लिखित दुआ रहनी चाहिए।

अल्लाहुम्मा कुन लिवलिये-कल हुज्जत इब्निल हसन सलवातुका अलैहि व अला आबाएहि फी हाज़ेहिस्साअत व फी कुल्ले साअत वलियंव व हाफ़िज़ंव व काइदंव व नासिरंव व दलीलंव व ऐना हत्ता तुस्कि-नहु अर्ज़का तौअंव व तुमत्तेअहु फ़ीहा तवीला..

اللَّهُمَّ كُنْ لَوْلِيِّكَ الْحُجَّةِ بْنِ الْحَسَنِ صَلَواتِكَ عَلَيْهِ وَ عَلَى آبائِهِ فِي بَدَةِ السَّاعَةِ وَ فِي كُلِّ .
سَاعَةٍ وَّلِيًّا وَ حَافِظًا وَ قَائِدًا وَ نَاصِرًا وَ دَلِيلًا وَ عَيْنًا حَتَّى تُسَكِّنَهُ أَرْضَكَ طَوْعًا وَ تُنمِّعَهُ فِيهَا
[طويلاً]-[16]

ऐ अल्लाह ! अपने वली, हुज्जत इब्नुल हसन के लिए (तेरा दरुद व सलाम हो उन पर और उन के बाप दादाओं पर, इस वक़्त और हर वक़्त) वली व मुहाफ़िज़ व रहबर व मददगार व दलील और देख रेख करने वाला बन जा, ताकि उनको अपनी ज़मीन पर अपनी मर्ज़ी से बसाये और उनको ज़मीन पर लंबी समय तक लाभान्वित रख।

सच्चा इन्तेज़ार करने वाला, सदका देते वक़्त पहले अपने इमाम (अ. स.) को नज़र में रखता है अर्थात पहले उनका सदका निकालता है और बाद में अपना। वह हर तरह से उनके दामन से चिपका रहता है और हर वक़्त उनके मुबारक ज़हूर का अभिलाषी रहता है और उनके बेमिसाल व नूरानी चेहरे को देखने के लिए रोता बिलकता रहता है।

अज़ीज़ुं अलैया अन अरल खल्क वला तुरा

इन्तेज़ार 2

[عَزِيزٌ عَلِيٌّ اَنْ اَرَى الخَلْقَ وَ لَا تُرَى] 17”

वास्तव में मेरे लिए सख्त है कि मैं सब को तो देखूँ लेकिन आपकी ज़ियारत न कर सकूँ।

इन्तेज़ार के रास्ते पर चलने वाला आशिक हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के नाम से संबंधित परोग्रामों में सम्मिलित होता है ताकि अपने दिल में उनकी मुहब्बत की जड़ों को और अधिक मज़बूत करे। वह हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के नाम से संबंधित पवित्र स्थानों पर ज़ियारत के लिए जाता है - जैसे मस्जिदे सहला, मस्जिदे जमकरान, और सामर्रा का वह तहखाना जिसमें से आप ग़ायब हुए थे।

हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के ज़हूर का इन्तेज़ार करने वालों की ज़िन्दगी में उनकी याद का बेहतरीन जलवा यह है कि वह हर दिन अपने इमाम (अ. स.) से वादा करें और उन्हें वफ़ादारी का वचन दे और अपने उस वचन पर बाक़ी रहने का ऐलान करें।

जैसा कि हम दुआ ए अहद के इन वाक्यों में पढते हैं कि :

अल्लाहुम्मा इन्नी उजद्विदु लहु फ़ी सबीहते यौमी हाज़ा व मा इशतु मिन
अय्यामी अहदं व अकदं व बै-अतन लहु फ़ी उनुकी ला अहूलु अन्हु वला अज़ूलु
अ-ब-दा अल्लाहुम्मा इजअलनी मिन अंसारिहि व आवानिहि व अद्दाब्बीना अनहु व
अल-मुसारि-ईना अलैहि फ़ी क़ज़ा ए हवाइजि-हि व अल-मुमतसिलीना लि-
अवामिरिही व अल-मुहाम्मीना अन्हु व अस्साबिक़ीना इला इरा-दतिहि व अल-मुस-
तश-हदीना बैना यदैहि।

اللَّهُمَّ إِنِّي أَعُوذُ بِكَ فِي صَبِيحَةِ يَوْمِي بِدَا وَ مَا عَشْتُ مِنْ أَيَّامِي عَهْدًا وَ عَقْدًا وَ بَيْعَةً لَهُ فِي
عُنُقِي لَا أَحُولُ عَنْهُ وَ لَا أَزُولُ أَبَدًا، اللَّهُمَّ اجْعَلْنِي مِنْ أَنْصَارِهِ وَ أَعْوَانِهِ ، وَ الدَّائِبِينَ عَنْهُ وَ
المُسَارِعِينَ إِلَيْهِ فِي فِضَاءِ حَوَائِجِهِ ، وَ الْمُؤْتَمِّلِينَ لِأَوَامِرِهِ ، وَ الْمُحَامِلِينَ عَنْهُ ، وَ السَّابِقِينَ إِلَى
[إِرَادَتِهِ ، وَ الْمُسْتَشْهِدِينَ بَيْنَ يَدَيْهِ “ 18]

ऐ अल्लाह ! मैं आज की सुबह और जब तक ज़िन्दा रहूँ, हर सुबह उन की बैअत
का अहद (प्रतिज्ञा) करता हूँ और उनकी यह बैअत मेरी गर्दन पर रहेगी न मैं
इससे हट सकता हूँ और न कभी अलग हो सकता हूँ। ऐ अल्लाह ! मुझे उनके
मददगारों, उनका बचाव करने वालों, उनकी ज़रूरतों को पूरा करने में तेज़ी से काम

करने वालों, उनके हुक्म की इताअत (आज्ञा पलन) करने वालों, उनकी तरफ़ से बचाव करने वालों, उनके मक़सदों की तरफ़ आगे बढ़ने वालों और उनके सामने शहीद होने वालों में से बना दे।

अगर कोई इंसान हमेशा इस अहद (प्रतिज्ञा) को पढ़ता रहे और दिल की गहराई से इसमें वर्णित शब्दों व वाक्यों का पाबन्द रहे तो कभी भी अपने इमाम की तरफ़ से लापरवाही नहीं करेगा। बल्कि वह हमेशा अपने इमाम की तमन्नाओं को पूरा करने और उनके ज़हूर के लिए रास्ता हमवार करने की कोशिश करेगा। सच तो यह है कि ऐसा ही इंसान उस हक़दार इमाम (अ. स.) के ज़हूर के वक़्त उनके मोर्चे पर हाज़िर होने की योग्यता रखता है।

हज़रत इमाम सादिक़ (अ. स.) ने फरमाया :

जो इंसान चालीस दिन तक सुबह के वक़्त अपने अल्लाह से यह अहद (प्रतिज्ञा) करे, ख़ुदा उसे हमारे क़ाइम (अ. स.) के मददगारों में शामिल कर देगा और अगर हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के ज़हूर से पहले उसे मौत आ गई तो ख़ुदा वन्दे आलम उसे क़ब्र से उठायेगा ताकि वह हज़रत क़ाइम (अ. स.) की मदद करे।

हार्दिक एकता

इन्तेज़ार करने वाले गिरोह के हर इंसान को चाहिए कि वह अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करने के अलावा अपने इमाम हज़रत महदी (अ. स.) के उद्देश्यों व मक़सदों के बारे में एक खास योजना तैयार करे। इससे भी अधिक स्पष्ट रूप में इस तरह कहा जा सकता है कि इन्तेज़ार करने वालों के लिए ज़रूरी है कि वह उस रास्ते पर चलने की कोशिश करें जिस से उन का इमाम राज़ी व खुश हो।

अतः इन्तेज़ार करने वालों के लिए ज़रूरी है कि वह अपने इमाम से किये हुए वादों पर बाकी रहें ताकि इमाम महदी (अ. स.) के ज़हूर के रास्ते हमवार हो जायें।

हज़रत इमाम महदी (अ. स.) अपने एक पैग़ाम में ऐसे लोगों के बारे में यह निम्न लिखित खुश ख़बरी सुनाते हैं :

अगर हमारे शिया (खुदा वन्दे आलम उन्हें अपनी आज पालन की तौफ़ीक़ प्रदान करे) अपने किये हुए वादों पर एक जुट हो जायें तो हमारी ज़ियारत की नेमत में देर नहीं होगी और पूरी व सच्ची पहचान व शनाख़्त के साथ जल्द ही हमारी मुलाक़ात हो जायेगी...[19]

यह वादे वही है जिनका वर्णन अल्लाह की किताब और अल्लाह के नबियों व वलियों की हदीसों में हुआ है। हम यहाँ पर उनमें से कुछ निम्न लिखित महत्वपूर्ण चीजों की तरफ़ इशारा कर रहे हैं।

1. जहाँ तक हो सके मासूम इमामों (अ. स.) की पैरवी करने की कोशिश करना और इमामों (अ. स.) के चाहने वालों से दोस्ती और उन के दुशमनों से दूरी व नफ़रत।

हज़रत इमाम मुहम्मद बाकिर (अ. स.) पैगम्बरे इस्लाम (स.) से रिवायत करते हैं कि उन्होंने फरमाया :

खुश नसीब है वह इंसान जो मेरे क़ाड़म को इस हाल में देखे कि उन के क्रियाम (आन्दोलन) से पहले खुद उनकी और उन से पहले इमामों की पैरवी करे और उनके दुशमनों से दूरी व नफ़रत का ऐलान करे, ऐसे इंसान मेरे दोस्त और मेरे साथी हैं और क्रियामत के दिन मेरे नज़दीक़ मेरी उम्मत के सब से महान इंसान होंगे...[20]

2. इन्तेज़ार करने वालों को दीन में होने वाले परिवर्तनों, बिदातों और समाज में फैलती हुई अश्लीलताओं व बुराईयों से लापरवा नहीं रहना चाहिए, बल्कि अच्छी सुन्नतों और अखलाक़ी मर्यादाओं को खत्म होता देख उन्हें दोबारा ज़िन्दा करने की कोशिश करनी चाहिए। पैग़म्बरे इस्लाम (स.) से रिवायत है कि उन्होंने फ़रमाया : इस उम्मत के आखरी ज़माने में एक गिरोह ऐसा आयेगा कि उसका सवाब सर्व प्रथम इस्लाम क़बूल करने वालों की बराबर होगा और वह अम्र बिल मअरुफ़ और नही अनिल मुन्कर (अच्छे काम करने की सिफ़ारिश करना और बुरे कामों से रोकना) करेंगे और बुराईयाँ फैलाने वालों से जंग करेंगे...[21]

3. ज़हूर का इन्तेज़ार करने वालों की यह ज़िम्मेदारी है कि दूसरों के साथ सहयोग व मदद को अपनी योजनाओं का आधार बनायें और इन्तेज़ार करने वाले समाज के लोगों को चाहिए कि संकुचित दृष्टिकोण और स्वार्थता को छोड़ कर समाज के ग़रीब व निर्धन लोगों पर ध्यान दें और उनकी ओर से लापरवाही न करें।

शिओं के एक गिरोह ने हज़रत इमाम मुहम्मद बाकिर (अ. स.) से कुछ नसीहतें करने की अपील की तो इमाम (अ. स.) ने फरमाया :

तुम में जो लोग मालदार हैं उन्हें चाहिए कि गरीबों की मदद करें और उनके साथ प्यार व मोहब्बत भरा व्यवहार करें और तुम सबको चाहिए कि आपस में एक दूसरे के बारे में अपने मन में अच्छे विचार रखो...[22]

उल्लेखनीय बात यह है कि इस आपसी सहयोग व मदद का दाएरा अपने इलाके से मखसूस नहीं है बल्कि इन्तेज़ार करने वालों की अच्छाईयाँ और नेकियाँ दूर दराज़ के इलाकों में भी पहुँचती हैं, क्यों कि इन्तेज़ार के परचम के नीचे किसी भी तरह की जुदाई और अपने पराये का एहसास नहीं होता।

4. इन्तेज़ार करने वाले समाज के लिए ज़रूरी है कि समाज में महदवी रंग व बू पैदा करें। हर जगह उनके नाम और उनकी याद का परचम लहरायें और इमाम (अ. स.) के कलाम व किरदार को अपनी बात चीत और व्यवहार के ज़रिये सार्वजनिक करें। इस काम के लिए अपनी पूरी ताक़त के साथ कोशिश करनी चाहिए, जो इस काम को करेंगे, उन पर अइम्मा ए मासूमीन (अ. स.) का ख़ास करम होगा।

हज़रत इमाम मुहम्मद बाकिर (अ. स.) के सहाबी, अब्दुल हमीद वास्ती, इमाम (अ. स.) की खिदमत में अर्ज़ करते हैं :

हम ने अम्र फरज (ज़हूर) के इन्तेज़ार में अपनी पूरी ज़िन्दगी वक्फ़ कर दी है और यह काम कुछ लोगों के लिए परेशानी का सबब बन गया है।

इमाम (अ. स.) ने जवाब में फरमाया :

ऐ अब्दुल हमीद ! क्या तुम यह सोचते हो कि जिस इंसान ने खुद को खुदा वन्दे आलम के लिए वक्फ़ कर दिया है, खुदा वन्दे आलम ने उस बन्दे के लिए मुशकिलों से निकलने का कोई रास्ता नहीं बनाया है ?! खुदा की कसम उसने ऐसे लोगों की मुशकिलों का हल बनाया है, खुदा वन्दे आलम रहमत करे उस इंसान पर जो हमारे अम्र (विलायत) को ज़िन्दा रखे...[23]

आखरी बात यह कि इन्तेज़ार करने वाले समाज को यह कोशिश करनी चाहिए कि वह समस्त सामाजिक पहलुओं में दूसरे समाजों के लिए नमूना बने और इंसानियत को निजात व मुक्ति देने वाले के ज़हूर के लिए तमाम ज़रूरी रास्तों को हमवार करे।

इन्तेज़ार के प्रभाव

कुछ लोगों का यह विचार है कि विश्व स्तर पर सुधार करने वाले (इमाम (अ. स.) का इन्तेज़ार, इंसानों को निष्क्रिय और लापरवाह बना देता है। जो लोग इस इन्तेज़ार में रहेंगे कि एक विश्वस्तरीय समाज सुधारक आयेगा और जुल्म, अत्याचार व बुराईयों को खत्म कर देगा, तो वह बुराईयों के सामने हाथ पर हाथ रखे बैठे रहेंगे और खुद कोई कदम नहीं उठाएँ बल्कि खामोश बैठे जुल्म व सितम का तमाशा देखते रहेंगे।

यह दृष्टिकोण बहुत सादा व निराधार है और इसमें गहराई से काम नहीं लिया गया है। क्योंकि हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के इन्तेज़ार, उसकी विशेषताओं, उसके पहलुओं और इन्तेज़ार करने वाले की विशेषताओं के बारे में जिन बातों का वर्णन हुआ है उनसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हज़रत इमाम महदी (अ. स.) का इन्तेज़ार इंसान को निष्क्रिय और लापरवाह नहीं बनाता है, बल्कि उनकी गतिविधियों को तेज़ करने व उन्हें परिपक्व बनाने में सहायक है।

इन्तेज़ार, इन्तेज़ार करने वालों में एक मुबारक व उद्देश्यपूर्ण जज़बा पैदा करता है। इन्तेज़ार करने वाला, इन्तेज़ार की हकीकत से जितना ज़्यादा परिचित होता जाता है, उसकी रफ़्तार मक़सद की तरफ़ उतनी ही बढ़ती जाती है। इन्तेज़ार के

अन्तर्गत, इंसान स्वार्थता से आज़ाद हो कर खुद को इस्लामी समाज का एक हिस्सा समझता है, अतः फिर वह समाज सुधार के लिए जी जान से कोशिश करता है। जब कोई समाज ऐसे सोगों से सुसज्जित हो जाता है तो उस समाज में अच्छाईयों व मर्यादाओं का राज हो जाता और समाज के सभी लोग नेकियों की तरफ कदम बढ़ाने लगते हैं। जिस समाज में सुधार, उम्मीद, खुशी और आपसी सहयोग, सहानुभूति व हमदर्दी का महौल पाया जाता है उसमें धार्मिक विश्वास फलते फूलते हैं और लोगों में महदवियत का नज़रीया पैदा होता है। इन्तेज़ार की बरकत से इन्तेज़ार करने वाले, बुराईयों के दलदल में नहीं फँसते बल्कि अपने दीन और अक्रीदों की हिफ़ाज़त करते हैं। वह इन्तेज़ार के ज़माने में अपने सामने आने वाली मुश्किलों में सब्र से काम लेते हैं और खुदा वन्दे आलम का वादा पूरा होने की उम्मीद में हर मुसीबत और परेशानी को बर्दाश्त कर लेते हैं। वह किसी भी वक़्त सुस्ती और मायूसी का शिकार नहीं होते।

आप ही बताईये कि ऐसा कौन सा धर्म व मज़हब है जिसने अपने अनुयायियों के सामने इतना साफ़ व रौशन रास्ता पेश किया है ? ! ऐसा रास्ता जो अल्लाह की ललक में तय किया जाता हो और उस के नतीजे में हद से ज़्यादा सवाब व ईनाम मिलता हो !।

इन्तेज़ार करने वालों का सवाब

खुश नसीब है वह इंसान जो अच्छाईयों व नेकियों के इन्तेज़ार में अपनी आँखे बिछाये हुए हैं। वास्तव उन लोगों के लिए कितना ज़्यादा सवाब है जो हज़रत इमाम महदी (अ. स.) की विश्वव्यापी हुकूमत का इन्तेज़ार कर रहे हैं। और कितना बड़ा रुत्बा है उन लोगों का जो काइम आले मुहम्मद (अ. स.) के सच्चे मुन्तज़िर हैं।

हम उचित समझते हैं कि इन्तेज़ार नामक इस अध्याय के अन्त में हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के ज़हूर का इन्तेज़ार करने वालों की उच्च श्रेष्ठताओं व मान सम्मान का वर्णन करें और इस संदर्भ में मासूम इमामों (अ. स.) की हदीसों को आप लोगों के सामने पेश करें।

हज़रत इमाम सादिक (अ. स.) फरमाते हैं :

"खुश नसीब हैं काइमे आले मुहम्मद के वह शिआ जो ग़ैबत के ज़माने में उनके ज़हूर का इन्तेज़ार करें और उनके ज़हूर के ज़माने में उनकी आज्ञा का पालन करते हुए उनकी पैरवी करें। यही लोग खुदा वन्दे आलम के महबूब (प्रियः) बंदे हैं और उनके लिए कोई दुखः दर्द न होगा...। "[24]

वास्तव में इस से बढ़ कर और क्या गर्व होगा कि उनके सीने पर खुदा वन्दे आलम की दोस्ती का तम्गा लगा हुआ है। वह किसी दुखः दर्द में कैसे घिर सकते हैं, जबकि कि उनकी ज़िन्दगी और मौत दोनों की कीमत बहुत ज़्यादा है।

हज़रत इमाम सज्जाद (अ. स.) फरमाते हैं कि

"जो इंसान हमारे काइम (अ.स.) की ग़ैबत के ज़माने में हमारी विलायत (मुब्बत) पर बाक़ी रहेगा, खुदा वन्दे आलम उसे शुहदा ए बद्र व ओहद के हज़ार शहीदों का सवाब प्रदान करेगा... "[25]

जी हाँ ! ग़ैबत के ज़माने में अपने इमामे ज़माना (अ. स.) की विलायत पर और अपने इमाम से किये हुए वादों पर बाक़ी रहने वाले लोग, ऐसे फौजी हैं जिन्होंने पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के साथ मिल कर अल्लाह के दुशमनों से जंग की हो और जंग के मैदान में अपने खून में नहाये हों।

वह मुन्तज़िर जो रसूल (स.) के इस महान बेटे, इमाम ज़माना (अ. स.) के इन्तेज़ार में अपनी जान हथेली पर लिए खड़े हुए हैं, वह अभी से जंग के मैदान में अपने इमाम के साथ मौजूद हैं।

हज़रत इमाम जाफ़र सादिक (अ. स.) फरमाते हैं :

अगर तुम शिओं में से कोई इंसान हज़रत इमाम महदी अ. स. के ज़हूर के इन्तेज़ार में मर जाये तो ऐसा है जैसे वह अपने इमाम (अ. स.) के खेमे में है।--- यह कह कर इमाम (अ. स.) थोड़ी देर के लिए खामोश रहे फिर फरमाया : बल्कि उस इंसान की तरह है जिसने इमाम (अ. स.) के साथ मिल कर जंग में तलवार चलाई हो। इस के बाद फरमाया : नहीं, खुदा की कसम वह उस इंसान की मिस्ल है जिसने रसूले इस्लाम (स.) के सामने शहादत पाई हो...[26]

यह वह लोग हैं जिन को पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने सदियों पहले अपना भाई और दोस्त कहा है और उन से अपनी दिली मुहब्बत और दोस्ती का ऐलान किया है।

हज़रत इमाम मुहम्मद बाकिर (अ. स.) ने फरमाया :

एक दिन पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने अपने असहाब के सामने अल्लाह से दुआ की : पालने वाले ! मुझे मेरे भाइयों को दिखला दे। पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने इस वाक्य को दो बार कहा। पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के असहाब ने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल ! क्या हम आप के भाई नहीं हैं ?!

पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने फरमाया कि तुम लोग मेरे असहाब हो और मेरे भाई वह लोग हैं जो आखिरी ज़माने में मुझ पर ईमान लायेंगे, जबकि उन्होंने मुझे नहीं देखा होगा। खुदा वन्दे आलम ने मुझे उनके नाम उनके बापों के नाम के साथ बताये हैं। उनमें से हर एक का अपने दीन पर अडिग व साबित कदम रहना अंधेरी रात में गोन नामक पेड़ से कांटा तोड़ने और दहकती हुई आग को हाथ में लेने से भी ज़्यादा सख्त है। वह हिदायत की मशाल हैं खुदा वन्दे आलम उनको खतरनाक बुराईयों से निजात व छुटकारा देगा...[27]

पैग़म्बरे इस्लाम (स.) ने यह भी फरमाया :

खुश नसीब हैं वह इंसान जो हम अलेबैत के काइम से इस हाल में मिले, कि उनके क्रियाम से पहले उनकी पैरवी करते हों, उन के दोस्तों को दोस्त रखता हों

और उनके दुश्मनों से दूर रहता हों व नफ़रत करता हों, वह उनसे पहले इमामों को भी दोस्त रखता हों, उनके दिलों में मेरी दोस्ती, मवद्दत व मुहब्बत हो तो वह मेरे नज़दीक मेरी उम्मत के सब से आदरनीय इंसान हैं...।[28]

अतः जो इंसान पैग़म्बरे इस्लाम (स.) के नज़दीक इतने प्रियः व महान हैं, वही खुदा वन्दे आलम के संबोधन को सुनेगें, ऐसी आवाज़ को जो इशक व मुहब्बत में डूबी होगी और जो खुदा वन्दे आलम से बहुत अधिक नज़दीक होने का इशारा करती होगी।

हज़रत इमाम मुहम्मद बाकिर (अ. स.) ने फरमाया :

एक ज़माना ऐसा आयेगा जिसमें मोमिनों का इमाम गायब होगा, अतः खुश नसीब है वह इंसान जो उस ज़माने में हमारी विलायत पर साबित क़दम रहे। बेशक उनका कम से कम इनाम यह होगा कि खुदा वन्दे आलम उनसे संबोधन करेगा कि ऐ मेरे बन्दो तुम मेरे राज़ और इमाम गायब पर ईमान लाये हो और तुम ने उसकी तस्दीक की है, अतः मेरी तरफ़ से बेहतरीन ईमान की खुश ख़बरी है, तुम हकीकत में मेरे बन्दे हो, मैं तुम्हारे आमाल को क़बूल करता हूँ और तुम्हारे गुनाहों को माफ़ करता हूँ, मैं तुम्हारी बरकत की वजह से अपने बन्दों पर बारिश

नाज़िल करता हूँ और उनसे बलाओं को दूर करता हूँ, अगर तुम उन लोगों के बीच न होते तो मैं गुनहगार लोगों पर ज़रूर अज़ाब नाज़िल कर देता...।[29]

लेकिन इन इन्तेज़ार करने वालों को किस चीज़ के ज़रिये आराम व सकून मिलेगा है, उनके इन्तेज़ार की घड़ियां कब खत्म होगी, किस चीज़ से उनकी आँखों को ठंडक मिलेगी, उनके बेकरार दिलों को कब चैन व सकून मिलेगा, क्या जो लोग उम्र भर इन्तेज़ार के रास्ते पर चले हैं और जो हर तरह की मुश्किलों को बर्दाश्त करते हुए इसी रास्ते पर इस लिए चलते हैं ताकि हज़रत इमाम महदी (अ. स.) के हरे भरे चमन में क़दम रखें और अपने प्रिय: मौला के साथ बैठें। वाकिअन इस से बेहतरीन और क्या अंजाम हो सकता है और इस से बेहतर और कौन सा मौका हो सकता है।

हज़रत इमाम मूसा क़ाज़िम (अ. स.) ने फरमाया :

खुश नसीब हैं हमारे वह शिया जो हमारे क़ाज़िम की ग़ैबत के ज़माने में हमारी दोस्ती की रस्सी को मज़बूती से थामे रखें और हमारे दुशमनों से दूर रहें। वह हम से हैं और हम उनसे हैं। वह हमारी इमामत पर राज़ी हैं और हमारी इमामत को कबूल करते हैं, अतः हम भी उनके शिआ होने से खुश व राज़ी हैं, वह बहुत खुश

नसीब हैं !! ख़ुदा की क़सम यह इंसान क़ियामत के दिन हमारे साथ हमारे दर्जे में होंगे...[30]

[1] . बिहार उल अनवार, जिल्द न. 52, पेज न. 122 ।

[2]. गैबते नोमानी, बाब 11, हदीस 16, पेज न. 207 ।

[3]. गैबते नोमानी, बाब 13, हदीस 66, पेज न. 252 ।

[4], कमालुद्दीन, जिल्द न. 1, हदीस 15, पेज न. 602

[5]. गैबते नोमानी, बाब न. 11, हदीस न. 16, पेज न. 200

[6], सूः ए बकरः, आयत न. 138

[7]. कमालुद्दीन, जिल्द न. 2, बाब 43, हदीस 12, पेज न. 171

[8]उसूले काफ़ी, जिल्द न. 1, बाब न. 84, हदीस न. 5, पेज न. 433

[9]गैबते नोमानी, बाब 10, फसल 3, हदीस 6, पेज न. 170

[10] . इस बारे में किताब के पहले अध्याय में कुछ बातों का उल्लेख हुआ है, दोबारा अध्ययन करने का कष्ट करें।

[11]. हम इमाम महदी (अ. स.) की सीरत और सिफ़तों के बारे में आने वाले अध्याय में उल्लेख करेंगे।

[12]. कमालुद्दीन, जिल्द न. 1, बाब न. 25, हदीस न. 3, पेज न. 535

[13]. बिहार उल अनवार, जिल्द न. 53. पेज न. 177 ।

[14] ग़ैबते नोमानी, बाब न. 11, हदीस न.16, पेज न.207

[15] कमालुद्दीन, जिल्द न.2, बाब न. 45, हदीस न.4 पेज न.237

[16]मफ़ातीह उल जिनान, माहे रमज़ान में तेइसवीं शब के अअमाल।

[17]मफ़ातीह उल जिनान दुआए नुदबा।

[18]. मफ़ातीह उल जिनान, दुआ ए अहद।

[19]. एहतेजाज, जिल्द न. 2, नम्बर 36, पेज न. 600

[20]. कमालुद्दीन, जिल्द न. 1, बाब 25, हदीस 2, पेज न. 535

[21]. दलाएले नबूवत, जिल्द न. 6, पेज न. 513 ।

[22]. बिहार उल अनवार, जिल्द न. 52, बाब 22, हदीस 5, पेज न. 123 ।

[23]. बिहार उल अनवार, जिल्द न. 52, बाब 22, हदीस 16, पेज न. 126 ।

[24]. कमालुद्दीन, जिल्द न. 2, बाब 33, हदीस 54, पेज न. 39 ।

[25]. कमालुद्दीन, जिल्द न. 2, बाब न. 31, हदीस न. 54, पेज न. 592

[26]. बिहार उल अनवार, जिल्द न. 52, पेज न. 126

[27]. बिहार उल अनवार, जिल्द न. 52, पेज न. 123

[28]. कमालुद्दीन, जिल्द न. 1, बाब न. 25, हदीस न. 2, पेज न. 535

[29]. कमालुद्दीन, जिल्द न. 1, बाब 32, हदीस 15, पेज न. 602 ।

[30]. कमालुद्दीन, जिल्द न. 2, बाब 43, हदीस 5, पेज न. 43 ।

फेहरीस्त

Contents

हमारे अक्रीदे	1
इस किताब की तालीफ़ का मक़सद और इसकी जिम्मेदारी	2
पहला हिस्सा	7
खुदा शनासी व तौहीद.....	7
1.अल्लाह का वुजूद:.....	7
2. सिफ़ाते जमाल व जलाल.....	8
3. उसकी ज़ाते पाक नामुतनाही (अपार, असीम)है.....	10
4) न वह जिस्म रखता है और न ही दिखाई देता है.....	12
5) तौहीद, तमाम इस्लामी तालीमात की रूहे है.....	14
6) तौहीद की किस्में.....	16
तौहीद दर ज़ात	16
तौहीद दर सिफ़ात	16
तौहीद दर अफ़आल.....	17
तौहीद दर इबादत.....	19
8) फ़रिशतगाने खुदा.....	22
9)इबादत सिर्फ़ अल्लाह से मखसूस है।.....	23
10) ज़ाते खुदा की हकीकत सबसे पौशीदा है.....	25
11)न तर्क न तशबीह	27
दूसरा हिस्सा	27

नबूवत	27
12)नबियों की बेसत का फलसफा	28
13) आसमानी अदयान की पैरवी करने वालों के साथ ज़िन्दगी बसर करना।.....	30
14- अंबिया का अपनी पूरी ज़िन्दगी में मासूम होना	32
15- अंबिया अल्लाह के फरमाँ बरदार बन्दे हैं।.....	33
16- अंबिया के मोजज़ात व इल्मे ग़ैब	35
17- पैग़म्बरों के ज़रिये शफ़ाअत का मस्ला.....	36
18- मस्ला-ए-तवस्सुल	38
19- तमाम अंबिया की दावत के उसूल एक हैं।.....	40
20- गुज़िश्ता अंबिया की खबरे.....	41
21- अंबिया और ज़िन्दगी के हर पहलू की इस्लाह	42
22- क़ौमी व नस्ली बरतरी की नफ़ी	43
23- इस्लाम और इंसान की सरिश्त.....	45
तीसरा हिस्सा	46
कुरआन और दिगर आसमानी किताबें	46
24- आसमानी किताबों के नज़ूल का फलसफा	46
25- कुरआन पैग़म्बरे इस्लाम (स.) का सब से बड़ा मोजज़ा है।.....	48
26- कुरआन में तहरीफ़ नही	50
27- कुरआन व इंसान की माद्दी व मानवी ज़रूरतें।.....	53
28- तिलावत, तदब्बुर ,अमल.....	55
29- इनहेराफ़ी बहसे	57
30- कुरआने करीम की तफ़सीर के ज़वाबित.....	57
31- तफ़सीर बिर्ाय के खतरात.....	60
चौथा हिस्सा.....	67

क्रियामत व मौत के बाद की ज़िन्दगी	68
34- मआद (क्रियामत)के बगैर ज़िन्दगी बेमफ़हूम है।.....	68
36- मआदे जिस्मानी.....	72
37- मौत का बाद का अजीब आलम	74
38- मआद व आमाल नामें	75
39- क्रियामत में शुहूद व गवाह.....	77
40-सिरात व मिज़ान.....	78
42- आलमे बरज़ख	83
43- मादी व मअनवी जज़ा.....	85
पाँचवा हिस्सा	88
मस्ला-ए-इमामत	88
44- इमाम हमेशा मौजूद रहता है।.....	88
45-हकीकते इमामत.....	89
46-इमाम गुनाह व खता से मासूम होता है.....	92
47- इमाम शरियत का पासदार होता है।.....	92
48- इमाम इस्लाम को सबसे ज़्यादा जानने वाला होता है।.....	92
49- इमाम को मनसूस होना चाहिए	93
50- आइम्मा पैग़म्बरे इस्लाम (स.)के ज़रिये मुऐय्यन हुए है।.....	94
51- हज़रत अली अलैहिस्सलाम पैग़म्बरे इस्लाम(स.)के ज़रिये नस्ब हुए।.....	96
52-हर इमाम की अपने से बाद वाले इमाम के लिए ताकीद.....	99
53- हज़रत अली अलैहिस्सलाम तमाम सहाबा से अफ़ज़ल थे।.....	101
54- सहाबा अक्ल व तारीख की दावरी में.....	101
55- आइम्मा-ए-अहले बैत (अ.)का इल्म पैग़म्बर (स.)का इल्म है।.....	105
छटा हिस्सा.....	109

मसाइले मुतफर्रिक.....	109
56- हुस्न व कुब्हे अकली का मसअला.....	110
57- अदले इलाही.....	111
58- इंसान की आज़ादी.....	112
60-अदले इलाही.....	116
61- दर्द नाक हादसों का फ़लसफ़ा.....	117
62- दुनिया का निज़ाम बेहतरीन निज़ाम है।.....	119
63- फ़िक्ह के चार आधार.....	120
64- इजतेहाद का दरवाज़ा हमेशा खुला हुआ है।.....	122
65- कानूनी ख़ला का वुजूद नहीं है.....	123
66-तक्रियेह का फ़लसफ़ा.....	125
67-तक्रियेह कहाँ पर हराम है.....	128
68- इस्लामी इबादात.....	129
69- नमाज़ को जमा करना.....	130
70- ख़ाक पर सजदह करना.....	132
71- पैग़म्बरो व आइम्मा की क़र्बों की ज़ियारत.....	133
72- अज़ादारी और इसका फ़लसफ़ा.....	135
73-अक़दे मुवक्कत (मुताअ).....	140
74- शियत की तारीख.....	144
75- शिया मज़हब का जोगराफ़िया.....	147
76- अहले बैत (अ.) की मीरास.....	148
77- दो अहम किताबें.....	150
78- इस्लामी उलूम में शियों का किरदार.....	153
इमामत	154

इमाम की ज़रूरत.....	157
इमाम की विशेषताएं.....	160
इमाम का इल्म.....	162
इमाम की इस्मत.....	163
इमाम, समाज को व्यवस्थित करने वाला होता है.....	166
इमाम का अखलाक बहुत अच्छा होता है.....	167
सबसे अच्छी बात.....	170
इन्तेज़ार 1.....	175
इन्तेज़ार की हकीकत और उसकी महत्ता.....	176
इमामे ज़माना (अ. स.) के इन्तेज़ार की विशेषताएं.....	179
इन्तेज़ार के पहलू.....	181
इन्तेज़ार करने वालों की ज़िम्मेदारियाँ.....	186
इमाम की पहचान.....	187
इमाम (अ.) को नमून ए अमल व आदर्श बनाना.....	191
इन्तेज़ार 2.....	197
हार्दिक एकता.....	200

इन्तेज़ार के प्रभाव.....	205
इन्तेज़ार करने वालों का सवाब	207
फेहरीस्त	217